सफलता के पांच मूल सूत्र
मन में कार्य करने की तीव्र इच्छा
कार्य करने के लिए पर्याप्त साधन
साधन का प्रयोग करने की यथार्थ विधि
अन्तिम परिणाम आने तक पूर्ण पुरुषार्थ
बाधाओं को सहन करने हेतु घोर तपस्या
'धर्म – अधर्म'
दूसरों के द्वारा किया गया जो व्यवहार हमें
अपने प्रति अच्छा लगता है
वैसा ही दूसरों के साथ करें,
इसी का नाम धर्म है और दूसरों के द्वारा
किया गया जो व्यवहार हमें
अच्छा नहीं लगता है वह हम दूसरों
के साथ करते हैं, इसी का नाम अधर्म है।
परा विद्या
Para Philosophical Questions & Answers
(प्रथम भाग)
जीवन को श्रेष्ठ बनाने वाले ५०० से भी
अधिक दार्शनिक आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर
ज्ञानेश्वरार्य:
दर्शनाचार्य, M.Com
प्रकाशक
वानप्रस्थ साधक आश्रम
आर्यवन, रोजड, गुजरात

परा विद्या परा विद्या

परा विद्या

(प्रथम भाग)

जीवन को श्रेष्ठ व सफल बनाने वाले ५०० से भी अधिक दार्शनिक-आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर

लेखक

ज्ञानेश्वरार्यः

दर्शनाचार्य *M.Com.*

प्रकाशक

१११११११

वानप्रस्थ साधक आश्रम

आर्यवन, रोजड़, पत्रा. सागपुर, जि. साबरकांठा (गुज.) ३८३३०७

दूरभाष : (०२७७४) २७७२१७, (०२७७०) २५७२२४, २८७४१७

वानप्रस्थ साधक आश्रम : (०२७७०) २५७२२०

E-mail : darshanyog@gmail.com Website : www.darshanyog.org

पुस्तक : परा विद्या (Para Philosophy) (प्रथम भाग)

लेखक : ज्ञानेश्वर आर्य

प्रकाशन तिथि : जनवरी, २००८, पौष शुक्ल २०६४

संस्करण : प्रथम

लागत मूल्य : ८-०० रुपये

मुख्य वितरक : आर्य रणसिंह यादव
द्वारा डा. सद्गुणा आर्या
'सम्यक्', गांधीग्राम, जूनागढ, (गुजरात)

प्राप्तिस्थान

१. **आर्यसमाज मंदिर,** महर्षि दयानन्द मार्ग, रायपुर दरवाजा बाहर, अहमदाबाद.

२. **विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द,** ४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६.

३. **आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय,** खर्राघाट, नर्मदापुरम्, होशंगाबाद (म.प्र.)

४. **ऋषि उद्यान,** आना सागर, पुष्कर रोड, अजमेर (राजस्थान)

५. **गुरुकुल आश्रम,** आमसेना, जिला नवापारा, (उड़ीसा)

६. **विजय वस्त्र भंडार,** निलंगा, ४१३५२१ (महाराष्ट्र)

७. **श्री चंद्रेश आर्य,** ३१०-बी, साधु वासवाणी सोसा., गोपालपुरी, गांधीधाम (गुज.)

८. **श्री धर्मेश आर्य,** वैदिक संस्कार केन्द्र, भटार रोड, सुरत.

९. **आर्य समाज मन्दिर,** पोरबंदर, राजकोट, भरुच, मोरबी, टंकारा, जूनागढ़, गांधीनगर, आणंद, जामनगर आदि ।

आशीर्वचन

जीवन को महान व श्रेष्ठ बनाने हेतु युवावस्था में बल, विद्या और धर्म की प्राप्ति एवं वृद्धि करनी होती है। इनकी प्राप्ति के लिए इनको जीवन में लाने के लिए युवकों को तन, मन, धन से पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। इससे उनका जीवन महान् श्रेष्ठ व सफल बनेगा और वे समस्त विश्व को सत्य मार्ग पर लाने में समर्थ हो सकेंगें।

उचित व्यायाम, खेलकूद, शारीरिक परिश्रम के माध्यम से शरीर स्वस्थ बनता है वेद और वेदानुकूल ग्रन्थों के श्रद्धापूर्ण स्वाध्याय, सत्पुरुषों के संग, यम नियम आदि अष्टांग योग का मन-वचन-कर्म से आदर्शरुप में पालन आदि से विद्या की वृद्धि और अज्ञान, अविद्या का नाश होता है। ईश्वर समर्पित रहकर सारे कार्यों को करने से धर्म के क्षेत्र में उन्नति होती है।

उपरोक्त तीनों क्षेत्र में उन्नति करने हेतु आचार्य ज्ञानेश्वरजी ने प्रश्नोत्तर के रूप में जो पुस्तिका की रचना की है यह एक उत्तम कार्य है। इससे पाठकों में विशेषकर युवक वर्ग में वैदिक धर्म, विशुद्ध योग, आदर्श आचरण आदि क्षेत्रों में जिज्ञासा बढ़ेगी, उनका कई समस्याओं का समाधान प्राप्त होगा। मनुष्य जीवन के चार प्रयोजन धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को शीघ्र प्राप्त कर सकेंगें। ईश्वर की कृपा से वे अपना जीवन सफल बनाते हुए अन्यों के जीवन को भी सफल बना पाएँगें। यह मेरी शुभकामना है।

स्वामी सत्यपति परिव्राजक

वानप्रस्थ साधक आश्रम
आर्यवन, रोजड़, (गुजरात)
१८—१—२००८

भूमिका

बहुत वर्षों से मेरी इच्छा थी कि वैदिक वाङ् मय से सम्बन्धित एक ऐसी पुस्तिका लिखूँ जिसमें अध्यात्म व दर्शन विषयों का समावेश हो और वह पुस्तक अनायास ही पाठकों को थोड़े से ही काल में विपुल ज्ञान प्राप्त करा दे। यद्यपि प्रचार भ्रमण आदि व्यस्त कार्यों में से अनेक बार समय मिलने पर बीसों विषयों पर ऐसे प्रश्नों का संग्रह तो मैंने कर ही लिया था। किन्तु उनको व्यवस्थित करने और संक्षेप में उनका उत्तर लिखने हेतु अवसर नहीं निकाल पाया।

इस बार जब "श्रेष्ठता और सफलता" विषयक युवकों का शिविर लगाने का निश्चय किया तो ऐसी पुस्तिका का प्रकाशन आवश्यक हो गया था। क्योंकि इसके बिना युवकों में जिज्ञासा व रुचि उत्पन्न नहीं करा पाते। अतः निश्चय किया कि १००० प्रश्नों को उठाकर संक्षिप्त उत्तर दिये जायें। समय बहुत कम था मात्र एक मास का, साथ ही अवान्तर कार्य बहुत थे। प्रचार, प्रकाशन, शिविर, प्रबन्ध आदि के कार्यों में इतना व्यस्त रहा कि चाहते हुए भी १००० प्रश्नोत्तरों को शुद्ध रूप में लिख नहीं पाया। अतः ब्रह्मचारियों की सहायता ली।

स्वामी ध्रुवदेव जी, ब्र. प्रशान्त जी, ब्र. वेदप्रकाश जी, ब्र. ईश्वरानन्द जी, ब्र. राजीव जी आदि ने उन विभिन्न विषयों पर प्रश्नोत्तरों का संग्रह किया पुनरपि सुन्दरता, एक रूपता, क्रमबद्धता नहीं बन पायी और पुनरावृत्ति भी अनेकत्र प्रतीत हुई, कार्य निष्पन्न होने नहीं पा रहा था। अन्त में ब्र. दिनेश जी ने तन्मयता से पुस्तिका की बहुत सी विसंगतियों, विकृतियों, अपूर्णताओं, विकलताओं को दूर किया और ब्र. प्रियेश जी ने मुखपृष्ठ बनाकर सुन्दर रूप देने का प्रयास किया।

थोड़े से काल में हजार प्रश्नों का संक्षिप्त-सुन्दर-आकर्षक-ज्ञान वर्धक संग्रह एक ही पुस्तिका में असंभव जान पड़ा। अतः प्रारम्भ में लगभग ५०० प्रश्नोत्तरों के संग्रह का प्रथम भाग प्रकाशित करने का निश्चय किया है। कालान्तर में द्वितीय भाग भी प्रकाशित करायेंगे जो पूर्व रूप में संग्रहित तो है किन्तु अस्त-व्यस्त है। निश्चय ही थोड़े से पृष्ठों में सत्य सनातन प्राचीन वैदिक आध्यात्मिक वाङ्मय को प्रदर्शित कराने वाली यह पुस्तिका अपने ढंग का हमारा प्रथम प्रयास है।

पुस्तिका में विषयों के प्रस्तुतिकरण में अनेक दृष्टिकोण से न्यूनतायें हैं, यथा विषय अति संक्षिप्त है, इसमें हेतु प्रमाण भी नहीं है और उदाहरणों का भी अभाव है इत्यादि। लेकिन एक बात का मुझे सन्तोष है कि पुस्तिका को पढ़ने से पुस्तिका से ईश्वरीय वैदिक ऋषिकृत शास्त्रीय महत्त्व के विषयों के उत्तर चाहे सन्तोष कारक न मिले किन्तु प्रश्नों को पढ़ने मात्र से ही पाठकों के मन में एक जिज्ञासा अवश्य ही उत्पन्न होगी कि "इस बात में प्रमाण क्या है", "कारण क्या है" और "उदाहरण क्या है", "यह मैं विस्तार से जानूँ"। बस इतने मात्र से हम अपने को कृतार्थ मानेंगे। क्योंकि जब तक व्यक्ति के मन में जिज्ञासा ही उत्पन्न नहीं होती है तब तक वह विषय को विस्तार से जानने का प्रयास ही नहीं करता है।

शीघ्रता में किया गया प्रथम प्रयास है। सुधी जन कृपा करके त्रुटियाँ, दोष, अप्रामाणिकता प्रमाण पूर्वक दर्शायेंगे तो हमें सुधारने में सहयोग मिलेगा और नवीन संस्करण शुद्ध रूप में बना लेंगे। उन नवयुवकों के लिए, जो, शीघ्रता से अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, यह पुस्तिका उपयोगी होगी, इसी विश्वास के साथ...

दिनांक-१८-०१-२००८

ज्ञानेश्वरार्यः

वानप्रस्थ साधक

आश्रम

अनुक्रमणिका

विषय	*पृष्ठ संख्या*
❍ ***आशीर्वचन***	३
❍ ***भूमिका***	३
❍ *प्रकृति*	५
❍ *शरीर-इन्द्रियाँ*	७
❍ *जीवात्मा*	९
❍ *संसार (सृष्टि)*	१३
❍ *वेद*	१५
❍ *कर्म-कर्मफल*	१६
❍ *ईश्वर*	२४
❍ *यज्ञ*	३३
❍ *संस्कार*	३८
❍ *स्वर्ग-नरक*	३९
❍ *श्राद्ध-तर्पण*	४०
❍ *भ्रम-निवारण*	४१
❍ *योग*	४५
❍ *ध्यान*	५१
❍ *विद्यार्थी*	५५
❍ *गुरुकुल शिक्षा प्रणाली*	५७
❍ *भक्ष्य-अभक्ष्य-विवेक*	५८
❍ *सफलता*	५८

प्रकृति

प्र. १. प्रकृति किसे कहते हैं ?

उत्तर : सत्व गुण, रजो गुण तथा तमो गुण, इन तीन तत्त्वों के सामूहिक नाम को प्रकृति कहते हैं ।

प्र. २. प्रकृति की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर : जगत् की रचना करने के लिए कारण के रूप में इसकी आवश्यकता होती है । जैसे घड़ा बनाने के लिए मिट्टी की आवश्यकता होती है ।

प्र. ३. क्या प्रकृति की उत्पत्ति और विनाश कभी होता है ?

उत्तर : प्रकृति की उत्पत्ति और विनाश कभी नहीं होता है ।

प्र. ४. सत्वगुण, रजो गुण तथा तमो गुण के स्वरूप को बतलाएं ?

उत्तर : सत्त्वगुण, आकर्षण तथा प्रकाश, रजो गुण चंचलता तथा दु:ख को उत्पन्न करता है तथा तमो गुण मूढ़ता (मोह) तथा स्थिरता को उत्पन्न करता है ।

प्र. ५. क्या प्रकृति में जीवात्माओं को उत्पन्न करने का सामर्थ्य है ?

उत्तर : प्रकृति में जीवात्माओं को उत्पन्न करने का सामर्थ्य नहीं है।

प्र. ६. क्या प्रकृति से जीवों के समस्त दु:ख दूर हो सकते हैं ?

उत्तर : प्रकृति से जीवों के समस्त दु:ख दूर नहीं हो सकते हैं ।

प्र. ७. संसार में दु:ख कितने प्रकार का है ?

उत्तर : संसार में दु:ख तीन – प्रकार का है – (१) आध्यात्मिक

(२)आधिभौतिक (३) आधिदैविक ।

प्र. ८. आध्यात्मिक दु:ख किसे कहते हैं ?

उत्तर : स्वयं की त्रुटि (मूर्खता) से प्राप्त होने वाले दु:ख को आध्यात्मिक दु:ख कहते हैं ।

प्र. ९. आधिदैविक दु:ख किसे कहते हैं ?

उत्तर : बाढ़, भूकम्प, अकाल आदि प्राकृतिक विपदाओं से प्राप्त होने वाले दु:ख को आधिदैविक दु:ख कहते हैं ।

प्र. १०. आधिभौतिक दु:ख किसे कहते हैं ?

उत्तर : अन्य पशु-पक्षी मनुष्य आदि जीवों से प्राप्त होने वाले दु:ख को आधिभौतिक दु:ख कहते हैं ।

प्र. ११. क्या प्रकृति से अपने आप संसार बन सकता है ?

उत्तर : नहीं, ईश्वर की शक्ति व सहायता बिना प्रकृति से अपने आप संसार नहीं बन सकता है ।

प्र. १२. क्या प्रकृति कभी चेतन हो सकती है ?

उत्तर : नहीं, प्रकृति कभी भी चेतन नहीं हो सकती है ।

प्र. १३. क्या प्रकृति की ब्रह्म से स्वतंत्र सत्ता है या ब्रह्म ही जगत् रूप में परिवर्तित हो जाता है ?

उत्तर : प्रकृति की सत्ता ब्रह्म से पृथक् और स्वतंत्र है । ब्रह्म जगत् रूप में कभी परिवर्तित नहीं होता हैं ।

प्र. १४. सत्व, रज, तम, वास्तव में गुण हैं या द्रव्य हैं ?

उत्तर : सत्व, रज, तम, वास्तव में द्रव्य हैं किंतु सत्वगुण, रजोगुण तमोगुण नाम से जाने जाते हैं ।

प्र. १५. क्या प्रकृति के समस्त परमाणु एक ही स्वरूप वाले हैं ?

उत्तर : नहीं, प्रकृति के परमाणु अलग-अलग स्वरूप = अलग-

अलग गुण, कर्म, स्वभाव, रंग, रुप, आकार, भार वाले हैं ।

प्र. १६. क्या ईश्वर की सहायता के बिना पाँच महाभूतों से रज वीर्य मिलने से स्वतः शरीर का निर्माण हो सकता है ?

उत्तर : नहीं, बिना ईश्वर की सहायता से पाँच महाभूतों से रज-वीर्य के मिलने से स्वतः शरीर का निर्माण नहीं हो सकता है ।

प्र. १७. प्रकृति सर्वत्र व्यापक है या नहीं ?

उत्तर : प्रकृति सर्वत्र व्यापक नहीं है बल्कि एकदेशी है अर्थात् एक निश्चित सीमा में फैली हुई है किन्तु ईश्वर उसके बाहर भी विद्यमान है ।

प्र. १८. प्रलय अवस्था कैसी होती है ?

उत्तर : प्रलय अवस्था में घोर अंधकार होता है। इस काल में न सूर्य होता है, न चांद, न पृथ्वी, न कोई शरीरधारी होता है। अपितु सर्वथा सुनसान, प्रकाश रहित अन्धकार जैसी अवस्था होती है।

प्र. १९. प्रलय काल कितना होता है ?

उत्तर : प्रलय काल ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष का होता है ।

प्र. २०. प्रलय काल की गणना (हिसाब) कौन करता है ?

उत्तर : प्रलय काल की गणना ईश्वर करता है ।

प्र. २१. प्रकृति के साथ जीव क्यों जुडता है और कब जुडता है ?

उत्तर : प्रकृति के साथ जीव अपनी अविद्या के कारण जुडता है तथा सृष्टि के आरंभ में जुडता है और मुक्ति से लौटने वाला जीव सृष्टि के मध्य में भी प्रकृति से जुडता है ।

प्र. २२. जीवात्मा प्रकृति के बंधन से कब छूटता है ?

उत्तर : जब प्रकृति और प्राकृतिक पदार्थों के प्रति आसक्ति को समाप्त कर पूर्ण वैराग्य को प्राप्त कर लेता है अर्थात् राग-द्वेष आदि समस्त क्लेशों को समाधि लगाकर नष्ट कर देता है तब प्रकृति

के बंधन से छूट जाता है ।

प्र. २३. मानव जीवन को सफल करने हेतु चार पुरुषार्थ कौन कौन से हैं ?

उत्तर : (१) धर्म (२) अर्थ (३) काम (४) मोक्ष। इन चार पुरुषार्थों को सिद्ध कर लेना मानव जीवन को सफल करने का उपाय है।

प्र. २४. जैसे सुख गुण प्रकृति का है वैसे ही क्या ज्ञान गुण भी प्रकृति का है ?

उत्तर : नहीं, ज्ञान गुण प्रकृति का नहीं है अपितु चेतन का है ।

प्र. २५. क्या मन रबर की तरह फैलता सिकुड़ता है ?

उत्तर : नहीं, मन रबर की तरह फैलता सिकुड़ता नहीं है ।

प्र. २६. क्या सत्व, रज, तम तीनों के बिना केवल दो गुणों से कोई पदार्थ बन सकता है ? सभी पदार्थों में तीन गुण होते ही है चाहे वे न्यून, अधिक क्यों न हों ।

उत्तर : नहीं, मात्र दो गुणों से कोई पदार्थ नहीं बन सकता ।

प्र. २७. अन्न (भोजन) कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर : अन्न तीन प्रकार होता है (१) सात्विक (२) राजसिक (३) तामसिक ।

प्र. २८. क्या अन्न का प्रभाव मन पर पड़ता है ?

उत्तर : हाँ, सात्विक अन्न खाने से मन शुद्ध होता है, राजसिक अन्न से मन में चंचलता आती है और तामसिक अन्न मोह, आलस्य आदि उत्पन्न करता है ।

प्र. २९. मानव जीवन को स्वस्थ रखने के मूल आधार स्तंभ कौन कौन से हैं ?

उत्तर : मानव जीवन को स्वस्थ रखने हेतु मूल आधार आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य का उत्तम प्रकार से सेवन करना है ।

शरीर–इन्द्रियाँ

प्र. ३०.मानव शरीर प्राप्ति का क्या प्रयोजन है ?

उत्तर : मानव शरीर प्राप्ति का प्रयोजन अपने कर्मफल का भोग करना एवं मोक्ष (दु:खों से छूटना) की प्राप्ति करना है ।

प्र. ३१.आत्मा के कर्म करने के साधन कितने हैं और कौन कौन से हैं ?

उत्तर : आत्मा के कर्म करने के दो प्रकार के साधन हैं – (१) आंतरिक साधन (२) बाह्य साधन । (१) आंतरिक साधन = मन, बुद्धि, अहंकार आदि (२) बाह्य साधन = हाथ, पैर, नाक, कान, मुँह आदि।

प्र. ३२.शरीर में कुल कितनी इन्द्रियाँ हैं उनके नाम बतायें ।

उत्तर : शरीर में कुल ग्यारह इन्द्रियाँ हैं (१) पाँच कर्मेन्द्रियाँ (२) पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (३) मन ।

प्र. ३३.मन का मुख्य कार्य क्या है ?

उत्तर : संकल्प और विकल्प करना मन का मुख्य कार्य है ।

प्र. ३४.पाँच ज्ञानेन्द्रियों के नाम एवं उनके कार्य बतायें ?

उत्तर :

इन्द्रिय	कार्य
घ्राण	गंध लेना
रसना	स्वाद लेना
चक्षु	देखना
श्रोत्र	सुनना
त्वक्	स्पर्श करना

प्र. ३५.पाँच कर्मेन्द्रियों के नाम एवं उनके कार्य लिखो ।

उत्तर :

इन्द्रिय	कार्य
हस्त	आदान–प्रदान (लेना–देना)
पाद	चलना
जिह्वा	बोलना, भोजन करना
उपस्थ	मूत्रत्याग करना
गुदा	मलत्याग करना

प्र. ३६.मन की उत्पत्ति किससे होती है ?

उत्तर : मन की उत्पत्ति अहंकार नामक तत्त्व से होती है ।

प्र. ३७.मन की कितनी अवस्थाएँ होती हैं ?

उत्तर : पाँच (१) क्षिप्त (२) विक्षिप्त (३) मूढ़ (४) एकाग्र (५) निरूद्ध ।

प्र. ३८.मन में उठने वाले विचार = वृत्तियाँ कितने प्रकार की होती हैं ?

उत्तर : पाँच (१) प्रमाण वृत्ति (२) विपर्यय वृत्ति (३) विकल्प वृत्ति (४) निद्रा वृत्ति (५) स्मृति वृत्ति ।

प्र. ३९.मन के दोष कितने हैं ?

उत्तर : तीन (१) राग (२) द्वेष (३) मोह ।

प्र. ४०.मन को शुद्ध करने के क्या क्या उपाय हैं ?

उत्तर : (१) शुद्ध ज्ञान प्राप्त करना (२) धर्म कार्य करना (३) ईश्वर की उपासना करना ।

प्र. ४१.मन जड़ है या चेतन या दोनों ?

उत्तर : मन एक जड़ पदार्थ है, चेतन नहीं ।

प्र. ४२. मन को शुद्ध करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : मन को शुद्ध करने से शांति तथा स्थिरता की प्राप्ति होती है।

प्र. ४३. मन को एकाग्र करना संभव है या असंभव ?

उत्तर : मन को एकाग्र करना संभव है ।

प्र. ४४. मन को एकाग्र करने के उपाय कौन से हैं ?

उत्तर : ईश्वर का चिंतन करना व उसकी आज्ञाओं का पालन करना अर्थात् योगाभ्यास करना तथा गायत्री आदि मंत्रों का जाप करना।

प्र. ४५. मन अशुद्ध कैसे होता है ?

उत्तर : मांसाहार, नशा करने तथा अश्लील साहित्य आदि के पढ़ने से मन अशुद्ध हो जाता है एवं वैर-विरोध, झूठ बोलने आदि से भी मन अशुद्ध होता है ।

प्र. ४६. मानसिक तनाव को कैसे दूर कर सकते हैं ?

उत्तर : अपनी दिनचर्या को व्यवस्थित करके, बहुत से काम एक साथ आरम्भ न करके, अपनी क्षमता से अधिक कार्य स्वीकार न करके, अपनी इच्छाओं को कम करके तथा ईश्वर का ध्यान करके मानसिक तनाव को दूर कर सकते हैं ।

प्र. ४७. मानव जीवन में कौन सी विशेषताएँ हैं जो अन्य प्राणियों में नहीं हैं ?

उत्तर : (१) विकसित वाणी (२) उत्तम बुद्धि (३) हाथ (४) कर्म करने की स्वतंत्रता ।

प्र. ४८. किसके धारण करने पर मानव पशु-पक्षी आदि से श्रेष्ठ बनता है ?

उत्तर : धर्म के धारण करने पर मानव पशु, पक्षी आदि से श्रेष्ठ बनता है ।

प्र. ४९. ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ किससे जुड़कर कार्य करती हैं ?

उत्तर : ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ मन से जुड़कर कार्य करती हैं ।

प्र. ५०. मन किससे जुड़कर कार्य करता है ?

उत्तर : मन आत्मा से जुड़कर कार्य करता है ।

प्र. ५१. बुद्धि का मुख्य कार्य क्या है ?

उत्तर : बुद्धि का मुख्य कार्य निर्णय करना है ।

प्र. ५२. अहंकार का क्या कार्य है ?

उत्तर : अहंकार का कार्य 'मैं' की अनुभूति करवाना है कि मेरी सत्ता है = मैं हूँ ।

प्र. ५३. मुख्यरूप से शरीर कितने प्रकार के होते हैं ।

उत्तर : चार प्रकार के शरीर होते हैं ।
(१) अण्डज (२) जरायुज (३) स्वेदज (४) उद्भिज्ज ।

प्र. ५४. शरीर कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर : शरीर तीन प्रकार का होता है । (१) स्थूल शरीर (२) सूक्ष्म शरीर (३) कारण शरीर ।

प्र. ५५. शरीर और संसार के निर्माण (उत्पत्ति) की संक्षिप्त प्रक्रिया क्या है ?

उत्तर : प्रकृति से सर्वप्रथम महत्तत्त्व नामक तत्व की उत्पत्ति होती है। महत्तत्त्व से अहंकार नामक तत्त्व उत्पन्न होता है। अहंकार से पंचतन्मात्राएँ एवं इन्द्रियाँ। तन्मात्राओं से पंचमहाभूत उत्पन्न होते हैं तथा पंचमहाभूत से शरीर और संसार का निर्माण होता है।

प्र. ५६. अंत:करण किसे कहते हैं ?

उत्तर : आत्मा के निकटतम साधन मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार को अंत:करण कहते हैं ।

प्र. ५७. सूक्ष्म शरीर में कुल कितने तत्त्व होते हैं उनके नाम लिखो ।

उत्तर : सूक्ष्म शरीर में कुल १८ तत्त्व होते हैं, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ तथा पाँच तन्मात्राएँ और मन, बुद्धि तथा अहंकार।

प्र. ५८. क्या सूक्ष्म शरीर, स्थूल शरीर के नष्ट होने के साथ ही नष्ट हो जाता है ?

उत्तर : नहीं, स्थूल शरीर के नष्ट होने पर भी सूक्ष्म शरीर नष्ट नहीं होता है अपितु जब तक जीवात्मा की मुक्ति न हो जाए, तब तक यह जीवात्मा के साथ में जन्म जन्मान्तर तक चलते रहता है अथवा प्रलय समय में नष्ट होता है ।

प्र. ५९. कारण शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर : सत्व, रज और तम इन तीन तत्त्वों को कारण शरीर कहते हैं।

प्र. ६०. सभी जीवों का कारण शरीर अलग अलग है अथवा एक ही है ।

उत्तर : सभी जीवों का कारण शरीर अलग अलग नहीं होता अपितु एक ही होता है ?

प्र. ६१. क्या कारण शरीर के समान, सूक्ष्म शरीर, स्थूल शरीर सभी जीवों का एक ही होता है ?

उत्तर : नहीं, सभी जीवों का स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर अलग अलग होता है ।

जीवात्मा

प्र. ६२. जीवात्मा किसे कहते हैं ?

उत्तर : एक ऐसी वस्तु जो अत्यंत सूक्ष्म है, अत्यंत छोटी है, एक जगह रहने वाली है, जिसमें ज्ञान अर्थात् अनुभूति का गुण है, जिस में रूप रंग, गंध, भार नहीं है, कभी नाश नहीं होता, जो सदा से है और सदा रहेगी, जो मनुष्य-पशु-पक्षी आदि का शरीर धारण करती है तथा कर्म करने में स्वतंत्र है उसे जीवात्मा कहते हैं ।

प्र. ६३. जीवात्मा के दु:खों का कारण क्या है ?

उत्तर : जीवात्मा के दु:खों का कारण मिथ्या ज्ञान है ।

प्र. ६४. क्या जीवात्मा स्थान घेरती है ?

उत्तर : नहीं, जीवात्मा स्थान नहीं घेरती। एक सूई की नोक पर विश्व की सभी जीवात्माएँ आ सकती हैं ।

प्र. ६५. जीवात्मा की प्रलय में क्या स्थिति होती है । क्या उस समय उसमें ज्ञान होता है ?

उत्तर : प्रलय अवस्था में बद्ध जीवात्माएं मूर्छित अवस्था में रहती है । उसमें ज्ञान होता है परन्तु शरीर, मन आदि साधनों के अभाव से प्रकट नहीं होता ।

प्र. ६६. प्रलय काल में मुक्त आत्माएं किस अवस्था में रहती हैं ?

उत्तर : प्रलय काल में मुक्त आत्माएँ चेतन अवस्था में रहती हैं और ईश्वर के आनन्द में मग्न रहती हैं ।

प्र. ६७. जीवात्मा के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर : आत्मा, जीव, इन्द्र, पुरुष, देही, उपेन्द्र, वैश्वानर आदि अनेक नाम वेद आदि शास्त्रों में आये हैं ।

प्र. ६८. क्या जीवात्मा अपनी इच्छा से दूसरे के शरीर में प्रवेश कर सकता है ?

उत्तर : जीवात्मा अपनी इच्छा से दूसरे के शरीर में प्रवेश नहीं कर सकता है ।

प्र. ६९. मुक्ति का समय कितना है ?

उत्तर : ३१ नील १० खरब ४० अरब वर्ष मुक्ति का समय है ।

प्र. ७०. जीवात्मा स्त्री है, पुरुष है या नपुंसक है ?

उत्तर : जीवात्मा का कोई लिंग नहीं होता है ।

प्र. ७१. क्या जीवात्मा, ईश्वर का अंश है ?

उत्तर : नहीं, जीवात्मा ईश्वर का अंश नहीं है । ईश्वर अखण्ड है उसके अंश = टुकड़े नहीं होते हैं ।

प्र. ७२. क्या जीवात्मा का कोई भार, रूप, आकार, आदि है ?

उत्तर : जीवात्मा में कोई भार, रूप, आकार,आदि गुण नहीं होते ।

प्र. ७३. जीवात्मा की मुक्ति एक जन्म में होती है या अनेक जन्म में होती हैं ?

उत्तर : जीवात्मा की मुक्ति एक जन्म में नहीं होती अपितु अनेक जन्मों में होती है ।

प्र. ७४. क्या जीवात्मा मुक्ति में जाने के बाद पुनः संसार में वापस आता है ।

उत्तर : जी हाँ, जीवात्मा मुक्ति में जाने के बाद पुनः शरीर धारण करने के लिए वापस आता है ।

प्र. ७५. जीवात्मा के लक्षण क्या हैं ?

उत्तर : जीवात्मा के लक्षण इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, ज्ञान, सुख, दुःख की अनुभूति करना है ।

प्र. ७६. मेरा मन मानता नहीं, यह कथन ठीक है ?

उत्तर : मेरा मन मानता नहीं, यह कथन ठीक नहीं है। जड़ मन को चलाने वाला चेतन जीवात्मा है।

प्र. ७७. क्या जीवात्मा कर्मों का फल स्वयं भी ले सकता है ?

उत्तर : हाँ, जीवात्मा कुछ कर्मों का फल स्वयं भी ले सकता है जैसे चोरी का दण्ड भरकर । किंतु अपने सभी कर्मों का फल जीवात्मा स्वयं नहीं ले सकता है ।

प्र. ७८. क्या जीवात्मा कर्म करते हुए थक जाता है ?

उत्तर : नहीं, जीवात्मा कर्मों को करते हुवे थकता नहीं है अपितु शरीर, इन्द्रियों का सामर्थ्य घट जाता है ।

प्र. ७९. जीवात्मा में कितनी स्वाभाविक शक्तियाँ हैं ?

उत्तर : जीवात्मा में २४ स्वाभाविक शक्तियाँ हैं ।

प्र. ८०. शास्त्रों में आत्मा को जानना क्यों आवश्यक बताया गया है ?

उत्तर : जीवात्मा के स्वरूप को जानने से शरीर, इन्द्रिय और मन पर अधिकार प्राप्त हो जाता है, परिणाम स्वरूप आत्मज्ञानी समस्त बुरे कामों से बचकर उत्तम कार्यों को ही करता है ।

प्र. ८१. जीवात्मा का स्वरूप (गुण, कर्म, स्वभाव, लम्बाई, चौड़ाई, परिमाण) क्या है ?

उत्तर : जीवात्मा अणु स्वरूप, निराकार, अल्पज्ञ, अल्पशक्तिमान है, वह चेतन है और कर्म करने में स्वतंत्र है, बाल की नोंक के दश हजारवें भाग से भी सूक्ष्म है ।

प्र. ८२. जीवात्मा शरीर में कहाँ रहता है ?

उत्तर : जीवात्मा मुख्य रूप से शरीर में स्थान विशेष जिसका नाम हृदय है, वहाँ रहता है किन्तु गौण रूप से नेत्र, कण्ठ इत्यादि स्थानों में भी वह निवास करता है ।

प्र. ८३. क्या, मनुष्य, पशु पक्षी, कीट पतंग आदि शरीरों में जीवात्मा भिन्न भिन्न होते हैं या एक ही प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : मनुष्य, पशु, पक्षी आदि कीट पतंग के शरीरों में भिन्न–भिन्न जीवात्माएँ नहीं हैं किन्तु एक ही प्रकार के जीवात्माएँ हैं, शरीरों का भेद है आत्माओं का भेद नहीं ।

प्र. ८४. जीवात्मा शरीर क्यों धारण करता है ? कब से कर रहा है और कब तक करेगा ?

उत्तर : जीवात्मा, अपने कर्मफल को भोगने और मोक्ष को प्राप्त करने के लिए शरीर को धारण करता है संसार के प्रारम्भ से यह शरीर धारण करता आया है और जब तक मोक्ष को प्राप्त नहीं करता है तब तक शरीर धारण करते रहता है ।

प्र. ८५. क्या मरने के बाद जीव, भूत, प्रेत, डाकन आदि भी बनकर भटकता है ?

उत्तर : मरने के बाद जीव न तो भूत, प्रेत बनता है और न ही भटकता है । यह लोगों के अज्ञान के कारण बनी हुई मिथ्या मान्यता है ।

प्र. ८६. शरीर में जीवात्मा कब आता है ?

उत्तर : जब गर्भ धारण होता है तभी जीवात्मा आ जाता है, अर्थात् जब रजवीर्य मिलते हैं तब ।

प्र. ८७. क्या जीव और ब्रह्म (ईश्वर) एक ही हैं ? अथवा क्या 'आत्मा सो परमात्मा' यह मान्यता ठीक है ?

उत्तर : जीव और ब्रह्म एक ही नहीं हैं अपितु दोनों अलग–अलग पदार्थ हैं जिनके गुण कर्म स्वभाव भी भिन्न–भिन्न हैं । अतः यह मान्यता ठीक नहीं हैं ।

प्र. ८८. क्या जीव ईश्वर बन सकता है ?

उत्तर : जीव कभी भी ईश्वर नहीं बन सकता है ।

प्र. ८९. क्या जीवात्मा एक वस्तु है ?

उत्तर : हाँ, जीवात्मा एक चेतन वस्तु है, वैदिक दर्शनों में वस्तु उसको कहा गया है, जिसमें कुछ गुण कर्म, स्वभाव होते हों ।

प्र. ९०. क्या जीवात्मा शरीर को छोड़ने में और नये शरीर को धारण करने में स्वतंत्र है ?

उत्तर : जीवात्मा को नये शरीर को धारण करने में स्वतन्त्र नहीं है अपितु ईश्वर के अधीन है । ईश्वर जब एक शरीर में जीवात्मा का भोग पूरा हो जाता है तो जीवात्मा को निकाल लेता है और उसे नया शरीर को प्रदान करता है ।

प्र. ९१. निराकार अणु स्वरूप वाला जीवात्मा इतने बड़े शरीरों को कैसे चलाता है ?

उत्तर : जैसे बिजली बड़े–बड़े यंत्रों को चला देती है ऐसे ही निराकार होते हुए भी जीवात्मा अपनी प्रयत्न रूपी चुंबकीय शक्ति से शरीरों को चला देता है ।

प्र. ९२. क्या जीवात्मा अपनी इच्छा से दूसरे के शरीर में प्रवेश कर सकता है ?

उत्तर : जीवात्मा अपनी इच्छा से दूसरे के शरीर में प्रवेश नहीं कर सकता है यह कार्य उसकी शक्ति और सामर्थ्य से बाहर का है।

प्र. ९३. शरीर छोड़ने के बाद (मृत्यु पश्चात्) कितने समय में जीवात्मा दूसरा शरीर धारण करता है ?

उत्तर : जीवात्मा शरीर छोड़ने के बाद (मृत्यु पश्चात्) ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार कुछ पलों में शीघ्र ही दूसरे शरीर को धारण कर लेता है। यह सामान्य नियम है।

प्र. ९४. क्या इस नियम का कोई अपवाद भी होता है ?

उत्तर : जी हाँ, इस नियम का अपवाद होता है। मृत्यु पश्चात् जब जीवात्मा एक शरीर को छोड़ देता है लेकिन अगला शरीर प्राप्त करने के लिए अपने कर्मानुसार माता का गर्भ उपलब्ध नहीं होता है तो कुछ समय तक ईश्वर की व्यवस्था में रहता है। पश्चात् अनुकूल माता-पिता मिलने से इश्वर की व्यवस्थानुसार उनके यहाँ जन्म लेता है।

प्र. ९५. जीवात्मा की मुक्ति क्या है और कैसे प्राप्त होती है ?

उत्तर : प्रकृति के बंधन से छूट जाने और ईश्वर के परम आनन्द को प्राप्त करने का नाम मुक्ति है। यह मुक्ति वेदादि शास्त्रों में बताये गये योगाभ्यास के माध्यम से समाधि प्राप्त करके समस्त अविद्या के संस्कारों को नष्ट करके ही मिलती है।

प्र. ९६. मुक्ति में जीवात्मा की क्या स्थिति होती है, वह कहाँ रहता है ? बिना शरीर इन्द्रियों के कैसे चलता, खाता, पीता है ?

उत्तर : मुक्ति में जीवात्मा स्वतन्त्र रूप से समस्त ब्रह्माण्ड में भ्रमण करता है और ईश्वर के आनन्द से आनन्दित रहता है तथा ईश्वर की सहायता से अपनी स्वाभाविक शक्तियों से धूमने फिरने का काम करता है। मुक्त अवस्था में जीवात्मा को शरीरधारी जीव की तरह खाने पीने की आवश्यकता नहीं होती है।

प्र. ९७. जीवात्मा की सांसारिक इच्छाएँ कब समाप्त होती हैं ?

उत्तर : जब ईश्वर की प्राप्ति हो जाती है और संसार के भोगों से वैराग्य हो जाता है तब जीवात्मा की संसार के भोग पदार्थ को प्राप्त करने की इच्छाएँ समाप्त हो जाती हैं।

प्र. ९८. जीवात्मा वास्तव में क्या चाहता है ?

उत्तर : जीवात्मा पूर्ण और स्थायी सुख, शान्ति, निर्भयता और स्वतन्त्रता चाहता है।

प्र. ९९. भोजन कौन खाता है शरीर या जीवात्मा ?

उत्तर : केवल जड़ शरीर भोजन को खा नहीं सकता और केवल चेतन जीवात्मा को भोजन की आवश्यकता नहीं है शरीर में रहता हुआ जीवात्मा मन इन्द्रियादि साधनों से कार्य लेने के लिए भोजन खाता है।

प्र. १००. एक शरीर में एक ही जीवात्मा रहता है या अनेक भी रहते हैं ?

उत्तर : एक शरीर में कर्त्ता और भोक्ता एक ही जीवात्मा रहता है अनेक जीवात्माएँ नहीं रहते। हाँ, दूसरे शरीर से युक्त दूसरा जीवात्मा तो किसी शरीर में रह सकता है, जैसे माँ के गर्भ

में उसका बच्चा ।

प्र. १०१. जीवात्मा शरीर में व्यापक है या एकदेशी (एक स्थानीय) ?

उत्तर : शरीर में जीवात्मा एकदेशी है व्यापक नहीं, यदि व्यापक होवे तो शरीर के घटने बढ़ने के कारण यह नित्य नहीं रह पायेगा।

प्र. १०२. जीव की परम उन्नति, सफलता क्या है ?

उत्तर : जीवात्मा की परम उन्नति आत्मा-परमात्मा का साक्षात्कार करके परम शान्तिदायक मोक्ष को प्राप्त करना है ।

प्र. १०३. क्या जीवात्मा को प्राप्त होने वाले सुख दु:ख अपने ही कर्मों के फल होते हैं ? या बिना ही कर्म किए दूसरों के कर्मों के कारण भी सुख दु:ख मिलते हैं ?

उत्तर : जीवात्मा को प्राप्त होने वाले सुख दु:ख अपने कर्मों के फल होते हैं किन्तु अनेक बार दूसरे के कर्मो के कारण भी परिणाम प्रभाव के रूप में (फल रूप में नहीं) सुख दु:ख प्राप्त हो जाते हैं ।

प्र. १०४. किन लक्षणों के आधार पर यह कह सकते हैं कि किस व्यक्ति ने जीवात्मा का साक्षात्कार कर लिया है ?

उत्तर : मन, इन्द्रियों पर अधिकार करके सत्यधर्म न्यायाचरण के माध्यम से शुभ कर्मों को ही करना और असत्य अधर्म के कर्मों को न करना तथा सदा शान्त, सन्तुष्ट और प्रसन्न रहना इस बात का ज्ञापक होता है कि इस व्यक्ति ने आत्मा का साक्षात्कार कर लिया है ।

संसार (सृष्टि)

प्र. १०५. एक सृष्टि (संसार) की आयु कितनी होती है ?

उत्तर : एक सृष्टि (संसार) की आयु चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष होती है।

प्र. १०६. सृष्टि (संसार) की आयु किनसे मापी जाती है व उनकी आयु कितनी होती है ।

उत्तर : सृष्टि (संसार) की आयु सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग से मापी जाती है। इनकी आयु निम्नलिखित है —

युग	वर्ष
सतयुग—	१७,२८,००० वर्ष
त्रेतायुग—	१२,९६,००० वर्ष
द्वापर युग —	८,६४,००० वर्ष
कलियुग —	४,३२,००० वर्ष
एक चतुर्युगी =	४३,२०,००० (तिरालिस लाख बीस हजार वर्ष)

प्र. १०७. एक सृष्टि में कुल कितनी चतुर्युगी होती है ?

उत्तर : एक सृष्टि में कुल एक हजार चतुर्युगी होती है ।

प्र. १०८. एक सृष्टि में कितने मन्वन्तर होते हैं ?

उत्तर : एक सृष्टि में चौदह मन्वन्तर होते हैं ।

प्र. १०९. वर्तमान में कौन सा मन्वन्तर चल रहा है व इसका नाम क्या है ?

उत्तर : वर्तमान में सातवाँ मन्वन्तर चल रहा है, इसका नाम वैवस्वत मन्वन्तर है ।

प्र. ११०. एक मन्वन्तर में कितनी चतुर्युगी होती है व वर्तमान में कौन सी चतुर्युगी चल रही है ?

उत्तर : एक मन्वन्तर में इकहत्तर चतुर्युगी होती है तथा वर्तमान में अट्ठाइसवीं चतुर्युगी चल रही है ।

प्र. १११. वर्तमान कलियुग के कितने वर्ष बीत चुके हैं ?

उत्तर : विक्रम संवत् २०६४ (ई.स. २००८) में वर्तमान कलियुग के ५१०७ वर्ष बीत चुके हैं ।

प्र. ११२. आगामी सतयुग का आरंभ कितने वर्षों के बाद होगा ?

उत्तर : आगामी सतयुग का आरंभ ४,२६,८९२ वर्षों के बाद होगा।

प्र. ११३. सृष्टि का नववर्ष किस दिन बदलता है ?

उत्तर : सृष्टि का नववर्ष चैत्र सुदी प्रतिपदा (प्रथमा) के दिन बदलता है ।

प्र. ११४. वर्तमान सृष्टि की आयु कितनी हो चुकी है ?

उत्तर : वर्तमान सृष्टि की आयु १ अरब ९६ करोड, ८ लाख, ५३ हजार १०७ वर्ष हो चुकी है। (विक्रम संवत् २०६४, ई.स. २००८ में)

प्र. ११५. क्या काल के कारण धर्म-अधर्म होते हैं जैसे कि सुनने में आता है कलियुग में पाप कर्म बढ़ जाते हैं ?

उत्तर : नहीं, काल के कारण धर्म-अधर्म नहीं होते हैं । प्रत्येक काल में धर्म और अधर्म दोनों की प्रवृतियाँ चलती हैं ।

प्र. ११६. सृष्टि (संसार) के प्रारम्भ में मनुष्यों को किसने उत्पन्न किया और कैसे उत्पन्न किया ?

उत्तर : सृष्टि (संसार) के प्रारम्भ में ईश्वर ने पृथ्वी के कणों से रज-वीर्य आदि धातु बनाई उसे मिलाकर पञ्चभौतिक अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन द्रव्यों से शरीर बनाकर, धरती के अन्दर से हजारों की संख्या में नवयुवक और नवयुवतियों को एक साथ उत्पन्न किया, जो शरीर से तो बलिष्ठ थे, किन्तु उनको बहुत ही कम ज्ञान था ।

प्र. ११७. फिर उन मनुष्यों को ज्ञान कैसे हुआ ?

उत्तर : ईश्वर ने जो हजारों की संख्या में मनुष्यों को उत्पन्न किया था, उनमें से सर्वाधिक पवित्रात्माएँ जो-जो थीं, उनको चुना और उनसे समाधि लगवा करके ईश्वर ने उनको ज्ञान दिया। वहीं से गुरु परम्परा चली और सब मनुष्यों को ज्ञान हुआ।

परा विद्या

वेद

प्र. ११८. वेद किसको कहते हैं ?

उत्तर : सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर द्वारा प्रदत्त ज्ञान को वेद कहते हैं।

प्र. ११९. वेद कितने हैं ? और कौन कौन से ?

उत्तर : वेद चार हैं (१) ऋग्वेद (२) यजुर्वेद (३) सामवेद (४) अथर्ववेद।

प्र. १२०. कौन कौन से चार ऋषियों को वेदज्ञान प्राप्त हुआ ?

उत्तर : (१) अग्नि, (२) वायु, (३) आदित्य और (४) अंगिरा। इन चार ऋषियों को वेदज्ञान प्राप्त हुआ।

प्र. १२१. किन किन ऋषियों ने कौन कौन से वेद प्राप्त किये ?

उत्तर : ऋग्वेद को अग्नि ऋषि ने प्राप्त किया, यजुर्वेद को वायु ऋषि ने प्राप्त किया, सामवेद को आदित्य ऋषि ने प्राप्त किया और अथर्ववेद को अंगिरा ऋषि ने प्राप्त किया।

प्र. १२२. ईश्वर ने चार ऋषियों को वेद ज्ञान कब दिया ?

उत्तर : ईश्वर ने चार ऋषियों को सृष्टि के प्रारम्भ में वेद ज्ञान दिया।

प्र. १२३. प्रत्येक वेद के अपने-अपने विषय क्या-क्या हैं ?

उत्तर : (१) ऋग्वेद का विषय ज्ञान है। (२) यजुर्वेद का विषय कर्म है। (३) सामवेद का विषय उपासना है। और (४) अथर्ववेद का विषय विज्ञान है।

प्र. १२४. चारों वेदों का ज्ञान सबसे पहले किसने प्राप्त किया ?

उत्तर : चारों वेदों का ज्ञान सबसे पहले ब्रह्मा ने प्राप्त किया।

प्र. १२५. ईश्वर ने चार ऋषियों को ही वेद ज्ञान क्यों दिया ?

उत्तर : ईश्वर ने चार ऋषियों को ही वेद ज्ञान इसलिए दिया क्योंकि वे सर्वाधिक पवित्रात्मा थे।

प्र. १२६. प्रत्येक वेद में कितने-कितने मन्त्र हैं और चारों वेदों में कुल कितने मन्त्र हैं ?

उत्तर : (१) ऋग्वेद में १०५२२ मन्त्र, (२) यजुर्वेद में १९७५ मन्त्र. (३) सामवेद में १८७५ मन्त्र और (४) अथर्ववेद में ५९७७ मन्त्र हैं। चारों वेदों में कुल २०३४९ मन्त्र हैं।

प्र. १२७. वर्ण कितने प्रकार के हैं और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : वर्ण चार प्रकार के हैं। (१) ब्राह्मण, (२) क्षत्रिय, (३) वैश्य और (४) शूद्र।

प्र. १२८. ब्राह्मण वर्ण के कर्म क्या क्या हैं ?

उत्तर : वेद का पढ़ना - पढ़ाना, यज्ञ करना-कराना, दान देना और लेना ब्राह्मण वर्ण के कर्म हैं।

प्र. १२९. क्षत्रिय वर्ण के कर्म क्या क्या हैं ?

उत्तर : राष्ट्र की सुरक्षा करना, न्याय, प्रशासन आदि क्षत्रिय वर्ण के कर्म हैं।

प्र. १३०. वैश्य वर्ण के कर्म क्या क्या हैं ?

उत्तर : व्यापार, कृषि, पशुपालन आदि वैश्य वर्ण के कर्म हैं।

प्र. १३१. शूद्र किसे कहते हैं, इसका क्या कार्य होता हैं ?

उत्तर : जिसकी बुद्धि मंद होती है तथा जो पढ़ लिखकर सभ्य, शिष्ट ज्ञानी नहीं बन पाता है और धन, विद्या से रहित होता है वह शूद्र कहलाता है। शूद्र का कार्य सेवा करना होता है।

प्र. १३२. मनुष्य जीवन को कितने आश्रमों में विभक्त किया गया

है और वे कौन कौन से हैं ?

उत्तर : मनुष्य जीवन को चार आश्रमों में विभक्त किया गया है। (१) ब्रह्मचर्य, (२) गृहस्थ, (३) वानप्रस्थ (४) संन्यास आश्रम।

प्र. १३३. वेदाङ्ग कौन कौन से हैं ?

उत्तर : शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष ।

प्र. १३४. उपवेद कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : उपवेद चार हैं, (१) आयुर्वेद, (२) धनुर्वेद, (३) गंधर्ववेद (४) अर्थवेद ।

प्र. १३५. वैदिक दर्शन कितने हैं और कौन कौन से हैं ?

उत्तर : वैदिक दर्शन – ६ हैं। (१) योग दर्शन, (२) सांख्य दर्शन, (३) वैशेषिक दर्शन, (४) न्याय दर्शन, (५) वेदान्त दर्शन और (६) मीमांसा दर्शन ।

प्र. १३६. वैदिक उपनिषद् कितने हैं ? और कौन कौन से ?

उत्तर : वैदिक उपनिषद् ग्यारह हैं उनके नाम इस प्रकार से हैं — ईश, केन, कठ, मांडूक्य, मुण्डक, प्रश्न, ऐत्तरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक् और श्वेताश्वतर ।

प्र. १३७. ब्राह्मण ग्रंथ किसे कहते हैं और उनकी संख्या कितनी है ?

उत्तर : वेद में वर्णित विषयों की व्याख्या करने वाले ग्रंथ ब्राह्मण ग्रंथ कहलाते हैं उनकी संख्या ४ है – (१) शतपथ ब्राह्मण (२) गोपथ ब्राह्मण (३) तांड्य ब्राह्मण (४) एतरेय ब्राह्मण।

कर्म और कर्मफल

प्र. १३८. किस प्रकार के कर्मों का फल कैसा ? कब ? कहाँ ? किस रूप में मिलता है ? क्या हम इस विषय में जान सकते हैं ?

उत्तर : कर्मों का फल कैसा, कब, कहाँ, किस रूप में मिलता है इसके विषय में पूर्णरूप से मनुष्य नहीं जान सकते, यह कार्य ईश्वर के द्वारा संचालित व नियंत्रित है। हाँ, कुछ–कुछ बातों को मनुष्य शास्त्रों के आधार पर जान सकता है।

प्र. १३९. क्या कर्म करके उसके फल से किसी भी प्रकार बचा जा सकता है ?

उत्तर : कोई भी मनुष्य कर्म करके उसके फल से नहीं बच सकता चाहे वह कितना ही तप करे, जप करे, ध्यान करे, दान दे, यज्ञ करे। कर्म का फल तो उसे अवश्य ही भोगना पड़ता है।

प्र. १४०. क्या अपने कर्मों के फल दूसरे को दे सकते हैं ? भुगा सकते हैं ? हाँ, तो कैसे ? नहीं, तो क्यों नहीं ?

उत्तर : कोई भी व्यक्ति अपने कर्मों का फल किसी दूसरे को नहीं दे सकता है। हाँ, अपने कर्मों के परिणामों और प्रभावों से दूसरे को सुख–दु:ख पहुँचा सकता है।

प्र. १४१. कर्मों का फल कौन देता है ? क्या केवल ईश्वर ही देता है या राजा, न्यायाधीश, समाज के व्यक्ति भी देते हैं या स्वयं भी ले सकता है ?

उत्तर : कर्मों का फल मुख्य रूप से ईश्वर ही देता है किन्तु परिवार, समाज और राष्ट्र में सुव्यवस्था बनाये रखने के लिये माता–

पिता, गुरु–आचार्य, पुलिस–न्यायाधीश–राजा आदि भी दण्ड देते हैं। कुछ कर्मों का फल व्यक्ति स्वयं भी ले सकता है। ईश्वर ने ऐसी व्यवस्था ऐसा निर्देश कर रखा है।

प्र. १४२. कर्मों का कर्त्ता कौन है ? जीव या मन या इन्द्रियाँ या शरीर या ईश्वर या अन्य कोई ?

उत्तर : कर्मों का कर्त्ता जीवात्मा ही है मन, इन्द्रियाँ, शरीर आदि तो जड़ हैं और कर्म करने के उपकरण (साधन) हैं ।

प्र. १४३. क्या दान, दक्षिणा, भेंट, पूजा, सेवा, जप, तप, तीर्थ, ध्यान आदि के द्वारा बुरे कर्मों के फलों को नष्ट या कम किया जा सकता है ? यदि नहीं तो इन सबका क्या लाभ है ?

उत्तर : दान, दक्षिणा आदि से बुरे कर्मों के फलों को नष्ट नहीं किया जा सकता है अपितु उनको करके पुण्य अर्जन किया जा सकता है। आगे बुरे कर्म न हो ऐसे संस्कार बनाए जा सकते हैं।

प्र. १४४. क्या प्रायश्चित करके बुरे कर्मों के फलों से बचा जा सकता है ? यदि नहीं, तो फिर प्रायश्चित की क्या उपयोगिता है ?

उत्तर : प्रायश्चित करके बुरे कर्मों के फलों से बचा नहीं जा सकता है किन्तु प्रायश्चित करने से बुरे कर्म करने के संस्कार नहीं बनते हैं और संस्कार नहीं बनते हैं तो भविष्य में बुरे कर्म करने की इच्छा नहीं होती है ।

प्र. १४५. जीव/मनुष्य जो सुख–दु:ख प्राप्त करता है क्या वह सब उसी के किए कर्मों का फल है या दूसरे के द्वारा भी सुख–दुख दिये जा सकते हैं ?

उत्तर : मनुष्य को जो सुख–दु:ख प्राप्त होता है वह अधिकांश उसी के किए कर्म का फल होता है किन्तु दूसरों के द्वारा भी किए गए कर्मों के परिणाम और प्रभाव के कारण सुख–दु:ख प्राप्त होते हैं।

प्र. १४६. कर्म का परिणाम, कर्म का प्रभाव तथा कर्म का फल इन तीनों में क्या अन्तर है ?

उत्तर : कर्म करने के पश्चात् जो तत्काल प्रतिक्रिया होती है वह कर्म रूपी परिणाम है ।

किसी क्रिया के परिणाम या फल को जानकर अपने पर या दूसरों पर शारीरिक, मानसिक सुख-दु:ख, भय, चिन्ता आदि का जो असर होता है उसे कर्म का प्रभाव कहते हैं।

अच्छे–बुरे कर्म के अनुरूप कर्त्ता को न्यायपूर्वक सुख–दु:ख प्रदान करना या सुख–दु:ख के साधन प्रदान करना कर्म का फल है ।

प्र. १४७. बुरे कर्म करने वाले व्यक्ति अधिक साधन, सुविधा, सुख सम्पन्न देखे जाते हैं जबकि ऐसे व्यक्ति तो सुख – साधन सुविधा रहित दु:खी होने चाहिए, ऐसा क्यों है ?

उत्तर : बुरे कर्म करने वाले साधन–सुविधाएँ भले ही प्राप्त कर लें लेकिन वे सुखी नहीं हो सकते हैं। उनको सुखी समझना

एक भ्रान्ति है ।

प्र. १४८. अच्छे (शुभ) कर्म करने वाले व्यक्तियों पर बाधा, विरोध, कष्ट आदि अधिक मात्रा में आते हैं, क्या यह शुभ कर्मों का फल है ?

उत्तर : अच्छे कर्म करने वाले धार्मिक व्यक्ति पर जो दु:ख आदि प्राप्त होते हैं वह अच्छे कर्मों का फल नहीं है अपितु परिवार, समाज, नगर आदि में जो अज्ञानी, स्वार्थी, अन्यायकारी व्यक्ति हैं उनके द्वारा ये बाधा आदि पहुँचाये जाते हैं ।

प्र. १४९. स्वयं किए हुए, अन्यों से करवाये हुए तथा समर्थित बुरे कर्मों के फल समान होते हैं या न्यूनाधिक होते हैं ?

उत्तर : सामान्य रूप से स्वयं किए हुए अच्छे–बुरे कर्मों का फल अधिक होता है। दूसरे से करवाए हुए कर्मों का फल मध्यम कोटि का होता है । दूसरों के द्वारा किए हुए, अच्छे–बुरे कर्मों के समर्थन का फल अपेक्षाकृत और कम होता है । किन्तु परिस्थिति विशेष में समर्थन किए हुए का भी फल अधिक हो सकता है चाहे स्वयं न किया हो ।

प्र. १५०. मानसिक, वाचनिक तथा शारीरिक कर्मों का फल समान रूप से होता है या न्यूनाधिक होता है ?

उत्तर : सामान्य रूप से मानसिक अच्छे–बुरे कर्मों का फल अपेक्षाकृत वाचनिक कर्मों से कम होता है। और वाचनिक कर्मों का फल शारीरिक कर्मों की अपेक्षा से कम होता है किन्तु विशिष्ट परिस्थितियों में शारीरिक की अपेक्षा वाचनिक, वाचनिक की अपेक्षा मानसिक कर्मों का फल अधिक हो सकता है ।

प्र. १५१. क्या अच्छे तथा बुरे कर्म समान रूप से किए जाएँ तो वे बिना ही फल दिए नष्ट हो जाते हैं ?

उत्तर : अच्छे और बुरे कर्म समान रूप से किए जाने पर वे बिना ही फल दिए नष्ट नहीं होते हैं वैदिक कर्म फल व्यवस्था में प्लस–माइनस, जमा–घटा का सिद्धान्त नहीं है । एक रूपये की चोरी का दण्ड लाख रूपये का दान करने पर भी नष्ट नहीं होता है ।

प्र. १५२. अपने पाप कर्मों का दु:खरूप फल भोगने वाले व्यक्ति के दु:ख को दूर करने का प्रयास करना ईश्वर की न्याय व्यवस्था में हस्तक्षेप नहीं होगा ?

उत्तर : दु:खी व्यक्ति के दु:ख को दूर करना परमात्मा की व्यवस्था में हस्तक्षेप नहीं है क्योंकि वेद, परमात्मा और शास्त्रों के अनुसार दु:खी व्यक्तियों की सहायता करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है ।

प्र. १५३. जीव कर्म करने में स्वतंत्र है तो कर्म–फल भोगने में परतंत्र क्यों है ?

उत्तर : जीवात्मा अपने कर्मों का फल स्वयं नहीं ले सकता क्योंकि उसका ज्ञान तथा सामर्थ्य बहुत कम है इसके अतिरिक्त जीवात्मा अपने बुरे कर्मों के दु:खरूप फल को प्राप्त करना भी नहीं चाहता इसलिए ईश्वर ने फल देने की व्यवस्था अपने अधिकार में रखी है ।

प्र. १५४. बुरे कर्म करने वाले (पापी) मनुष्य को न रोकना अधर्म (पाप) माना जाएगा ?

उत्तर : सामान्य रूप से बुरे कर्म करने वाले मनुष्य को न रोकना अधर्म कहा जाता है किन्तु जहाँ अधिकार न हो, दायित्व न हो, कर्त्तव्य न हो, प्रभाव न हो, उल्टा परिणाम आने की संभावना हो वहाँ पर बुरे कर्म करने वाले व्यक्ति को न रोकना अधर्म नहीं होता है ।

प्र. १५५. परिवार का पालक/स्वामी हिंसा, झूठ, चोरी, रिश्वत आदि अनैतिक कर्मों से धन कमाता है, साधन जुटाता है और उनका भोग परिवार के सभी लोग करते हैं तो क्या पाप सभी को लगेगा ?

उत्तर : हिंसा आदि अनैतिक साधनों से धन प्राप्त करने वाले कर्त्ता को ही फल मिलता है जो परिवार के अन्य व्यक्ति हैं जो उसके अधीन हैं, पराधीन हैं उनको फल नहीं मिलता है।

प्र. १५६. क्या कर्म नाम की कोई स्वतन्त्र चीज/वस्तु या पदार्थ की सत्ता वास्तव में है अथवा नहीं ? या यह एक कल्पना मात्र है ?

उत्तर : कर्म नाम की स्वतन्त्र चीज/वस्तु या पदार्थ की सत्ता वास्तव में है । यह कोई कल्पना नहीं है क्योंकि यह किसी के द्वारा की गई क्रिया–विशेष का नाम है, जिसका न्यायानुसार कोई फल मिलता है ।

प्र. १५७. महर्षि दयानन्द जी के अनुसार कर्म की परिभाषा क्या है ?

उत्तर : मन, इन्द्रिय और शरीर से जीव जो चेष्टा–विशेष करता है वह 'कर्म' कहलाता है ।

प्र. १५८. कर्म करने के साधन कितने हैं व कौन कौन से हैं ?

उत्तर : कर्म करने के साधन मुख्य रूप से तीन (३) हैं । (१) मन, (२) वाणी, (३) शरीर ।

प्र. १५९. कर्मों का फल कब मिलता है ?

उत्तर : कुछ कर्मों का फल इस जन्म में तत्काल, कुछ देर से (सप्ताह, महिने, वर्षों बाद) कुछ अगले जन्मों में और कुछ मुक्ति में मिलता है तथा कुछ कर्मों का फल मुक्ति से लौटने के बाद ही मिलता है ।

प्र. १६०. अच्छे (शुभ) कर्म करने से क्या लाभ होता है ? / शुभ कर्म क्यों करने चाहिए ?

उत्तर : अच्छे कर्म करने से अच्छा फल मिलता है। उससे व्यक्ति को सुख होता है । अच्छे संस्कार बनते हैं जिससे व्यक्ति निरन्तर धर्म के पथ पर चलता रहता है । अन्त में ईश्वर को भी प्राप्त कर लेता है ।

प्र. १६१. बुरे (अशुभ) कर्म करने से क्या हानि होती है ? / अशुभ कर्म क्यों नहीं करने चाहिए ?

उत्तर : बुरे कर्म से बुरा फल मिलता है। उससे व्यक्ति को दुःख होता है। बुरे संस्कार बनते हैं जिससे प्रभावित होकर व्यक्ति निरन्तर अधर्म के मार्ग पर चलता रहता है। परिणाम स्वरूप भयंकर नीच योनियों में जाता है और महादुःख के सागर में डूब जाता है ।

प्र. १६२. निष्काम कर्म और अकर्मण्यता में क्या भेद है ?

उत्तर : दोनों में भेद यह है कि निष्काम कर्म सबसे श्रेष्ठ उत्तम

कर्म है जिसके करने से व्यक्ति योगी, ऋषि—महर्षि बनकर अन्त में ईश्वर को प्राप्त कर समस्त दु:खों से छूट जाता है जबकि अकर्मण्यता निकृष्ट स्थिति है। अकर्मण्यता से व्यक्ति आलसी, प्रमादी हो जाता है, परिणाम में दु:ख के सिवाय उसके कुछ भी हाथ नहीं लगता।

प्र. १६३. मनुष्य शरीर से कितने और कौन कौन से शुभ (अच्छे) कर्म करता है ?

उत्तर : मुख्य रूप से मनुष्य शरीर से तीन प्रकार के अच्छे कर्म करता है। (१) रक्षा करना, (२) दान देना, (३) सेवा करना।

प्र. १६४. वाणी से किये जाने वाले शुभ (अच्छे) कर्म कितने व कौन कौन से हैं ?

उत्तर : वाणी से किये जाने वाले शुभ कर्म शास्त्र में चार प्रकार के बताये गये हैं। (१) सत्य बोलना, (२) मधुर (= मीठा) बोलना, (३) हितकर बोलना, (४) स्वाध्याय करना।

प्र. १६५. मन से जो अच्छे कर्म किये जाते हैं, वे कितने व कौन कौन से हैं ?

उत्तर : मन से तीन प्रकार के अच्छे कर्म किये जाते हैं। (१) दया, (२) अस्पृहा, (३) आस्तिकता।

प्र. १६६. मनुष्य शरीर से बुरे कर्म भी करता है। वे कितने और कौन कौन से हैं ?

उत्तर : मनुष्य शरीर से मुख्य रूप से तीन प्रकार के बुरे कर्म करता है। यथा – (१) हिंसा करना, (२) चोरी करना, (३) व्यभिचार करना।

प्र. १६७. मनुष्य वाणी से जो अशुभ कर्म करता है। उनकी संख्या शास्त्र में कितनी बताई गई और वे कौन कौन से हैं ?

उत्तर : मनुष्य वाणी से जो अशुभ कर्म करता है, उनकी संख्या शास्त्रानुसार चार हैं – (१) असत्य (झूठ) बोलना, (२) कठोर बोलना, (३) अहितकर बोलना, (४) व्यर्थ बोलना (असंगत = प्रसंग के बाहर बोलना)।

प्र. १६८. कर्मों का अन्तिम फल किस रूप में मिलता है ?

उत्तर : कर्मों का अन्तिम फल सुख—दु:ख के रूप में मिलता है।

प्र. १६९. मनुष्य-जन्म पाने के लिए कम से कम कितने और कैसे कर्म करने अनिवार्य हैं ?

उत्तर : कम से कम ५०% पुण्य और ५०% पाप कर्म होने पर साधारण मनुष्य का जन्म मिलता है। पचास प्रतिशत से थोड़ी भी कम पुण्य कर्म की मात्रा हुई तो मनुष्य जन्म नहीं मिलेगा। अर्थात् मनुष्य जन्म के लिए कम से कम पाप—पुण्य बराबर होने चाहिए।

प्र. १७०. ज्ञानपूर्वक सौ प्रतिशत (१००%) निष्काम कर्म कौन करता है ?

उत्तर : पूर्ण योगी, पूर्ण आस्तिक, पूर्ण ईश्वर समर्पित, पूर्ण वीतराग और उग्र तपश्चरण करने वाला संन्यासी व्यक्ति ही ज्ञानपूर्वक सौ प्रतिशत निष्काम कर्म करता हैं।

प्र. १७१. शत प्रतिशत (१०० %) निष्काम कर्म करने वाले को क्या फल मिलता है ?

उत्तर : जीवित अवस्था में विशुद्ध रूप में ईश्वर का सुख मिलता

है। तथा शरीर त्याग करने के पश्चात् मोक्ष में इकत्तीस नील दस खरब, चालीस अरब (३१, १०, ४०, ००००००००) वर्ष पर्यन्त ईश्वर के आनन्द को लगातार ईश्वर की सहायता से भोगता है ।

प्र. १७२. मनुष्य जन्म पाकर जीवात्मा पशु, पक्षी, कीट, पतंग, समुद्री जीव आदि शरीर में क्यों जाता है ?

उत्तर : मनुष्य जन्म पाकर ५०% से अधिक पाप करने पर उन कर्मों का दु:ख रूपी फल भोगने के लिए पशु पक्षी, कीट पतंग, समुद्री जीव आदि शरीर में जाता है ।

प्र. १७३. व्यक्ति जब पचास प्रतिशत (५० %) से अधिक पाप करता है तो पशु आदि नीच शरीरों में जाता है । पुन: उसे मनुष्य शरीर कब मिलता है ?

उत्तर : जब अधिक पाप का फल पशु आदि के शरीरों में भोग लिया जाता है तब पाप और पुण्य बराबर हो जाने पर पुन: उसे मनुष्य का शरीर मिलता है ।

प्र. १७४. क्या एक क्षण के लिए भी बिना कर्म किए रहा जा सकता है ?

उत्तर : नहीं, कर्म किये बिना एक क्षण भी नहीं रहा जा सकता।

प्र. १७५. क्या कर्म करना जीवन काल में कभी समाप्त हो सकता है ?

उत्तर : नहीं, मनुष्य को आजीवन कर्म करना ही पड़ता है ।

प्र. १७६. सकाम कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर : उन शुभ, अशुभ और मिश्रित कर्मों को सकाम कर्म कहते

हैं, जिसमें सांसारिक फल प्राप्ति की कामना बनी रहती है।

प्र. १७७. फल की दृष्टि से कर्म कितने प्रकार के होते हैं ? और वे कौन कौन से ?

उत्तर : फल की दृष्टि से कर्म तीन प्रकार के हैं – (१) संचित (२) प्रारब्ध, (३) क्रियमाण

प्र. १७८. कर्त्ता की दृष्टि से कर्म कितने प्रकार के हैं और कौन कौन से हैं ?

उत्तर : कर्त्ता की दृष्टि से तीन प्रकार के कर्म हैं। (१) कृत कर्म, (२) कारित कर्म, (३) अनुमोदित कर्म ।

प्र. १७९. कृत कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर : ऐसे कर्म जिनका कर्त्ता स्वयं ही होता है वे 'कृत' कर्म कहलाते हैं ।

प्र. १८०. कारित कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो कर्म स्वयं न करके दूसरों को आज्ञा देकर कराये जाते हैं उसे कारित कर्म कहते हैं ।

प्र. १८१. अनुमोदित कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिन कर्मों को साक्षात् स्वयं न करता है न ही कराने के लिए किसी को प्रेरित/आदेश करता है किन्तु किसी के किये गये कर्म का अनुमोदन वा समर्थन करता है, वे 'अनुमोदित' कर्म कहलाते हैं ।

प्र. १८२. क्या बिना कोई इच्छा = कामना (सांसारिक या मोक्ष) के कर्म करना संभव है ?

उत्तर : नहीं । सांसारिक या मोक्ष दोनों मे से कोई एक इच्छा (कामना) तो रहेगी ही। क्योंकि बिना इच्छा किये कर्म करना असंभव है ।

प्र. १८३. क्या जो कुछ कर्म संसार में हो रहा है, जो हुआ है और जो होने वाला है वह सब ईश्वर की इच्छानुसार, ईश्वर की ही लीला है अर्थात् ईश्वर ही कर रहा है, जीव नहीं। यह मान्यता ठीक है ?

उत्तर : जी नहीं, जितने बुरे कर्म हैं वह सब अपनी स्वतन्त्रता से कुसंस्कारों के कारण व्यक्ति = जीव करता है । जितने अच्छे कर्म हैं उनमें ईश्वर का भी हाथ है । अर्थात् जब जीव अच्छा कर्म करना चाहता है, उसे ईश्वर प्रेरणा, उत्साहा आदि प्रदान करता है ।

प्र. १८४. क्या माता–पिता की सेवा न करना सन्तान के लिए अपराध है ?

उत्तर : जो सन्तान गृहस्थ आश्रम में निवास करते है और अपने माता पिता की सेवा नहीं करते यह उनका अपराध है, पाप है ।

प्र. १८५. जिस माता–पिता की एक ही सन्तान है आगे–पीछे कोई नहीं है और वह सन्तान वैराग्य के कारण गृहत्याग कर देती है तो क्या उसका अपराध माना जायेगा ?

उत्तर : नहीं। यदि वैराग्य के कारण उसने घर छोड़ा है और अपने जीवन को सच्चे ईश्वर की उपासना से महान, उन्नत, श्रेष्ठ

बना रहा है तथा समाज-राष्ट्र का कल्याण कर रहा है तो उसका अपराध नहीं है। अपितु वह ईश्वर आज्ञा का पालन कर रहा है ।

प्र. १८६. पन्द्रह वर्ष की आयु पर्यन्त के सन्तान जो माता–पिता शिक्षक आदि बड़ों की उचित बात की अवज्ञा करे, उनके कथन के विरुद्ध आचरण करे, उसे दण्ड मिलना चाहिए या नहीं ?

उत्तर : दण्ड अवश्य मिलना चाहिए। यह वैदिक व्यवस्था है कि सन्तान के सुधार के लिए बिना द्वेष के आवश्यकतानुसार वाणी से तथा सावधानी पूर्वक शारीरिक ताड़ना भी करनी चाहिए।

प्र. १८७. किसी के अच्छे या बुरे कर्म का फल तत्काल प्राप्त होता न देखकर क्या यह विचारना उचित है कि उन कर्मों का फल आगे भी नहीं मिलेगा ?

उत्तर : ऐसा विचारना बिलकुल अनुचित है क्योंकि कर्म–फल से कोई भी बच नहीं सकता । कर्म फल देनेवाला ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वज्ञ तथा न्यायकारी है। अतः योग्य समय आने पर कर्म–फल मिलता ही है ।

प्र. १८८. आजकल प्रतिदिन हजारों की संख्या में शिशुओं को उत्पन्न होने से पहले गर्भ में ही मार दिया जाता है । तो क्या यह गर्भ में आने वाले जीव के कर्मों का फल है या माता–पिता का ?

उत्तर : गर्भ का धारण माता–पिता की इच्छा से होता है और गर्भपात भी उन्हीं की स्वतन्त्र इच्छा से होता है अतः गर्भपात के

कारण होने वाले भयंकर पाप के अपराधी गर्भपात कराने वाले, करने वाले तथा सहमति देने वाले सभी हैं। गर्भधारण करने वाले शिशु का इसमें कोई भी कर्मफल नहीं है। न ईश्वर की ओर से कोई प्रेरणा या विधान है कि गर्भपात कराया जाये। अपितु गर्भपात का निषेध है।

प्र. १८९. क्या बिना ज्ञान के भी कर्म होते हैं ?

उत्तर : सामान्य सिद्धान्त तो यही है कि बिना ज्ञान के कर्म नहीं होते क्योंकि जो कुछ भी कर्म मनुष्य करता है वह इच्छापूर्वक करता है। और वह इच्छा सुख प्राप्त करने तथा दुःख से छूटने रूप होती है। इसलिए अधिकांश कर्म ज्ञान पूर्वक ही होते हैं।

प्र. १९०. क्या भ्रान्ति, विवशता , मजबूरी या अल्पज्ञान से किये जाने वाले कर्मों का भी फल मिलता है ?

उत्तर : जी हाँ। भ्रान्ति, विवशता , मजबूरी या अल्पज्ञान से किये गये कर्मों का भी फल ईश्वर द्वारा मिलता है। चाहे वे अच्छे हों या बुरे। क्योंकि उन कर्मों से अन्यों को सुख–दुःख तो प्राप्त होता ही है।

प्र. १९१. क्या आयु जन्म से निश्चित है या घटायी-बढ़ायी जा सकती है ?

उत्तर : मनुष्य अपने कर्मों से, अपनी आयु को जो कि उसको पिछले जन्मों के कर्मों के फलस्वरूप मिलती है, घटा भी सकता है और बढ़ा भी सकता है। वेदानुकूल आचरण करेगा तो बढ़ जायेगी, विपरीत करेगा तो घट जायेगी।

प्र. १९२. क्या मनुष्य का अगला जन्म होता है ? / क्या मनुष्य का मरने के बाद पुनः जन्म होता है ?

उत्तर : हाँ। मनुष्य मरने के बाद पुनः जन्म ग्रहण करता है।

प्र. १९३. मरने के बाद मनुष्य पुनः जन्म ग्रहण क्यों करता है ?

उत्तर : मनुष्य जितना व जितने प्रकार का कर्म करता है, उन सभी का फल इसी जन्म में भोग नहीं सकता हैं। कुछ कर्म ऐसे होते हैं जिनका फल भोगने के लिए पुनः जन्म ग्रहण करता है।

प्र. १९४. मनुष्य मरने के बाद पुनः मनुष्य ही बनता है या पशु-पक्षी आदि भी बनता है ?

उत्तर : मनुष्य मरने के बाद मनुष्य ही बनेगा, यह जरूरी नहीं है। कर्मों के आधार पर पशु-पक्षी आदि भी बन सकता है।

प्र. १९५. मनुष्य की आत्मा अगला जन्म पाने के लिए किसी माँ के पेट में स्वयं चली जाती है या कोई ले जाता है ?

उत्तर : अगला जन्म पाने के लिए मनुष्य की आत्मा किसी माँ के पेट (गर्भाशय) में स्वयं नहीं चली जाती है बल्कि उसको परमात्मा (ईश्वर) ही ले जाते हैं।

प्र. १९६. दुःख किसे कहते हैं ?

उत्तर : बाधा, पीड़ा, कष्ट, पराधीनता आदि जिससे व्यक्ति बचना चाहता है उसे दुःख कहते हैं।

प्र. १९७. सुख किसे कहते हैं ?

उत्तर : स्वतंत्रता, निर्भयता, प्रसन्नता आदि जिसको प्राप्त करने के पश्चात् व्यक्ति छोड़ना नहीं चाहता, उसे सुख कहते हैं ।

प्र. १९८. मनुष्य सुखी कैसे होता है ?

उत्तर : विद्या, बुद्धि व ज्ञान प्राप्त करने और अच्छे कर्म करने और ईश्वर की उपासना करने से मनुष्य सुखी होता है ।

प्र. १९९. क्या मांस या अण्डा खानेवाले को पाप लगेगा ?

उत्तर : हाँ, मांस हो या अण्डा हो, दोनों के खानेवाले को पाप लगेगा। क्योकि इससे प्राणियों की हिंसा होती है। शास्त्र में भी इसका निषेध किया है ।

प्र. २००. व्यक्ति को किसी भी श्रेष्ठ कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर : किसी भी श्रेष्ठ कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए छः चीजों की आवश्यकता है, व्यक्ति को उनका संग्रह और उपयोग करना चाहिए। वे छः चीजें इस प्रकार हैं - (१) संस्कार, (२) तीव्र इच्छा, (३) पर्याप्त साधनों की उपलब्धि, (४) साधनों को प्रयोग करने की सही विधि, (५) परम पुरुषार्थ, (६) घोर तपस्या ।

प्र. २०१. सबसे श्रेष्ठ व उत्तम कर्म कौन सा है और उसका फल क्या है ?

उत्तर : बिना किसी लौकिक फल सुख की कामना के दूसरों का उपकार अर्थात् निष्काम कर्म सबसे श्रेष्ठ व उत्तम कर्म है । और उसका फल है जीते जी विशुद्ध ईश्वरीय सुख को भोगना तथा मृत्यु के बाद **३६** हजार बार सृष्टि के बनने और बिगड़ने तक पुनः जन्म न लेना, केवल आनन्द ही आनन्द भोगते रहना, दु:ख का लेशमात्र भी स्पर्श न होना । इस मोक्ष फल में शुद्ध ज्ञान व शुद्ध उपासना भी कारण है ।

परा विद्या

ईश्वर

प्र. २०२. ईश्वर किसे कहते है ?

उत्तर : एक ऐसी वस्तु जो सब जगह विद्यमान है, चेतन है, निराकार है, अनन्तज्ञान, अनन्तबल, अनन्त आनन्द, न्याय, दया आदि गुण से युक्त है उसका नाम ईश्वर है ।

प्र. २०३. ईश्वर का कोई रूप, रंग, भार, आकार, आदि है या नहीं ?

उत्तर : ईश्वर में ये गुण नहीं होते । इसी कारण ईश्वर को निर्गुण भी कहते हैं ।

प्र. २०४. संसार को ईश्वर बनाता है या जीव बनाते हैं या अपने आप बन जाता है ।

उत्तर : ईश्वर बनाता है। जीवों के पास इतना ज्ञान व सामर्थ्य नहीं है कि वे संसार को बना सकें। प्रकृति ज्ञानरहित तथा स्वयं क्रिया रहित होने से स्वयं संसार के रूप में नहीं आ सकती ।

प्र. २०५. ईश्वर से हमारे क्या क्या सम्बन्ध हैं ?

उत्तर : ईश्वर हमारा माता, पिता, गुरु, राजा, स्वामी, उपास्य आदि है। और हम उसके पुत्र, शिष्य, प्रजा, सेवक, उपासक आदि हैं।

प्र. २०६. ईश्वर जीवों से क्या चाहता है ?

उत्तर : ईश्वर चाहता है कि जीव उसकी आज्ञा का पालन करके संसार में सुखी रहें व मुक्तिपद को प्राप्त करें ।

प्र. २०७. ईश्वर की आज्ञा क्या है, यह कैसे पता चलता है ?

उत्तर : वेदों के पढ़ने से और ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभावों को जानने से उसकी आज्ञाओं का पता लगा सकते हैं ।

प्र. २०८. ईश्वर और आत्मा में क्या समानता है ?

उत्तर : ईश्वर और आत्मा में यह समानता है कि दोनों ही चेतन, पवित्र, अविनाशी, अनादि, निराकार हैं ।

प्र. २०९. ईश्वर और आत्मा में क्या भेद है ?

उत्तर : ईश्वर सर्वज्ञ है, आत्मा अल्पज्ञ हैं। ईश्वर के पास अपना उत्कृष्ट सुख है आत्मा के पास सुख नहीं है वह सुख लेने के लिए ईश्वर के पास या संसार के पदार्थों में जाता है।

प्र. २१०. ईश्वर का मुख्य व निज नाम क्या है ?

उत्तर : 'ओ३म्' यह परमात्मा का प्रधान निज नाम है। जैसे वेद में भी आया है "ओ३म् क्रतो स्मर" ।

प्र. २११. ईश्वर के मुख्य कार्य कौन कौन से हैं ?

उत्तर : ईश्वर के मुख्य रुप से ५ कार्य हैं — (१) सृष्टि को बनाना, (२) पालन करना, (३) संहार करना, (४) जीवों के कर्मों का फल देना, (५) वेदों का ज्ञान देना ।

प्र. २१२. प्रलय में ईश्वर कुछ करता है या सो जाता है ?

उत्तर : प्रलय समय में ईश्वर मुक्तात्माओं को आनन्द भुगाता है।

प्र. २१३. ईश्वर का ज्ञान सदा एक सा रहता है या घटता बढ़ता है ?

उत्तर : ईश्वर का ज्ञान सदा एकरस रहता है अर्थात् घटता बढ़ता नहीं है तथा वह असत्य भी नहीं होता ।

प्र. २१४. संसार को किसने धारण किया हुआ है ?

उत्तर : ईश्वर ने अपने सामर्थ्य से सब लोक—लोकान्तरों को (संसार

को) धारण कर रखा है ।

प्र. २१५. ईश्वर के सुख व सांसारिक पदार्थों के सुख में कोई अन्तर है या नहीं ?

उत्तर : ईश्वर के सुख व सांसारिक पदार्थों के सुख में अन्तर है। ईश्वर का आनन्द स्थायी व पूर्ण तृप्ति देने वाला है जबकि सांसारिक पदार्थों का सुख क्षणिक व दुःखमिश्रित है ।

प्र. २१६. ईश्वर व जीवों के बीच कोई दूरी है या नहीं ?

उत्तर : काल व स्थान की दृष्टि से जीव, ईश्वर से दूर नहीं हैं। ईश्वर हर समय, हर स्थान पर उनके साथ रहता है। परन्तु ज्ञान की दृष्टि से जीव ईश्वर से दूर हो जाते हैं। जो ईश्वर को नहीं जानते, मानते, व उसकी भक्ति नहीं करते वे जीव, ईश्वर से दूर हैं ।

प्र. २१७. ईश्वर की क्या विशेषता है ?

उत्तर : ईश्वर सदा अपने आनन्द में मग्न रहता है। ईश्वर में कोई न्यूनता, कोई दोष नहीं है। उसे किसी भौतिक पदार्थ की आवश्यकता नहीं होती ।

प्र. २१८. ईश्वर किस किस का स्वामी है ?

उत्तर : ईश्वर प्रकृति, जीवों, संसार व मोक्ष का स्वामी है ।

प्र. २१९. क्या जीव अपने कर्मों का फल पूर्ण रूप से स्वयं ले सकते हैं ?

उत्तर : नहीं, कर्मों का फल ईश्वर के अधीन है। वह अपनी व्यवस्था से कर्मफल देता है ।

प्र. २२०. क्या भक्त अपने सामर्थ्य से ईश्वर का दर्शन (अनुभूति) कर सकता है ?

उत्तर : नहीं, जब तक ईश्वर से विशेष ज्ञान विज्ञान न मिले व ईश्वर की कृपा न हो तब तक भक्त उसका दर्शन (अनुभूति) नहीं कर सकता।

प्र. २२१. जब परमेश्वर जन्म नहीं लेता तब निर्गुण व जब जन्म लेता है तब सगुण कहलाता है। क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर : नहीं, सगुण व निर्गुण का अर्थ भिन्न ही है। सर्वज्ञता, सर्वव्यापकत्व आदि गुणों से सहित होने से उसे सगुण व जड़त्व, मूर्खत्व, राग–द्वेष आदि गुणों से रहित होने से ईश्वर को निर्गुण कहते हैं ।

प्र. २२२. ईश्वर को जानने के पश्चात् योगी को क्या अनुभूति होती है ?

उत्तर : ईश्वर को जानने के पश्चात् योगी को यह अनुभूति होती है कि जो जानना था सो जान लिया, जो पाना था सो पा लिया, अब कुछ भी जानना या प्राप्त करना बाकी नहीं रहा।

प्र. २२३. मनुष्य जन्म पाकर करने योग्य सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य कौन सा है ?

उत्तर : ईश्वर को समझना व उसकी अनूभूति करना (प्रत्यक्ष करना) सबसे महत्वपूर्ण कार्य है ।

प्र. २२४. क्या ईश्वर विरक्त है ?

उत्तर : नहीं, जो प्राप्त हुए पदार्थ को छोड़ दे उसे विरक्त कहते

हैं ईश्वर सर्वव्यापक होने से किसी पदार्थ को नहीं छोड़ता इस दृष्टि से वह विरक्त नहीं हैं ।

प्र. २२५. क्या ईश्वर जीवों में या सांसारिक पदार्थो में राग रखता है ?

उत्तर : नहीं, राग अपने से भिन्न उत्तम पदार्थ में होता है। ईश्वर से कोई भी जीव या सांसारिक पदार्थ उत्तम नहीं हैं। अतः ईश्वर किसी से भी राग नहीं रखता है ।

प्र. २२६. क्या ईश्वर इस संसार के बाहर भी है ?

उत्तर : हाँ, है । अपितु ईश्वर इतना महान् है कि यह सारी सृष्टि तो उसके सामने परमाणु के तुल्य भी नहीं है ।

प्र. २२७. क्या ईश्वर हमें प्रतिदिन शिक्षा देता है ?

उत्तर : जी, हाँ। जीव जब बुरे या अच्छे काम करने की इच्छा करता है तो अन्दर से भय, लज्जा, शंका या आनन्द, उत्साह, निर्भयता प्राप्त होते हैं। यह अन्तर्यामी ईश्वर की शिक्षा है जिससे जीव बुरे व अच्छे कर्मों को जान सकता है ।

प्र. २२८. क्या संसार में कभी ईश्वर का अभाव होता है ?

उत्तर : नहीं, संसार का तो प्रलय में अभाव हो जाता है परन्तु उस समय भी ईश्वर व जीव व प्रकृति रहते हैं उनका तीनों कालों में अस्तित्व रहता है ।

प्र. २२९. मनुष्य संसार की हानि करते हैं तो क्या ऐसे में ईश्वर उन्हें देखकर दुःखी होता है ?

उत्तर : नहीं । परन्तु जो पापी हैं उन्हें अच्छा नहीं मानता व जो पुण्यात्मा हैं उन्हें अच्छा मानता है व उन्हें भय शंका लज्जा आदि के रूप में दण्ड देता ह उन्हें उत्साह, प्रेरणा भी देता है।

प्र. २३०. ईश्वर का दर्शन कौन करते हैं ?

उत्तर : वेद आदि शास्त्रों के विद्वान, धर्मात्मा व योगी मनुष्य ही ईश्वर का साक्षात्कार कर सकते हैं ।

प्र. २३१. क्या ईश्वर शरीर धारण करता या रोगी, बूढ़ा होता है ?

उत्तर : नहीं, ईश्वर कभी शरीर धारण नहीं करता है । न तो रोगी या बूढ़ा होता है वह तो बिना शरीर के ही अपने सब कार्य अपने सामर्थ्य से कर सकता है ।

प्र. २३२. राम, कृष्ण, शिव आदि ईश्वर की भक्ति करते थे या नहीं ?

उत्तर : हाँ, राम, कृष्ण, शिव आदि भी ईश्वर की भक्ति करते थे ।

प्र. २३३. ईश्वर जीव को पाप करने की प्रेरणा देता है या नहीं ?

उत्तर : नहीं, वह पवित्र है अतः न स्वयं पाप करता है न ही पाप करने की प्रेरणा देता है ।

प्र. २३४. किसी व्यक्ति का जीवन बिना ईश्वर को माने बिना उसकी उपासना किए अच्छी प्रकार से चल रहा है तो फिर ईश्वर को मानने व उसकी उपासना करने की आवश्यकता, अपेक्षा ही क्या है ?

उत्तर : ईश्वर की उपासना करने से विशेष ज्ञान, बल, आनन्द, शान्ति आदि गुणों की प्राप्ति होती है। इसलिए ईश्वर की उपासना अवश्य करनी चाहिये ।

प्र. २३५. क्या ईश्वर अपने भक्त के पापों, बुरे कर्मों के दुःख रूप फलों को क्षमा करता है यदि नहीं करता तो फिर उसकी भक्ति करने का क्या लाभ है ?

उत्तर : ईश्वर पापों के फल देने में कभी भी क्षमा नहीं करता है ईश्वर

की भक्ति करने से भविष्य में बुरे कर्म न करने की प्रेरणा ईश्वर से मिलती है । तथा घोर दु:ख, कष्ट, विपत्ति के आने पर भी इसे सहन करने की शक्ति मिलती है ।

प्र. २३६. संसार को बनाने, उसे चलाने से ईश्वर को क्या लाभ होता है ? यदि कोई लाभ नहीं होता है तो फिर क्यों बनाता है, चलाता है ?

उत्तर : ईश्वर को संसार को बनाने व चलाने से स्वयं को कोई लाभ नहीं होता फिर भी ईश्वर परोपकारी है, जीवों को सुख प्रदान करने के लिए संसार बनाता है, चलाता है ।

प्र. २३७. ईश्वर सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान् है तथा जीवों का हितैषी है तो फिर वह पापियों को (बुरे व्यक्तियों को) पाप करने से रोकता क्यों नहीं है ?

उत्तर : जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है इसलिए ईश्वर उसे पाप करने से हाथ पकड़कर तो नहीं रोकता किन्तु मन में भय, शंका, लज्जा आदि उत्पन्न करके संकेत अवश्य करता है यह उसका रोकना कहा जा सकता है । यह इसकी सीमा है ।

प्र. २३८. ईश्वर न्यायकारी है तो संसार में किसी को अंधा, लूला, लंगड़ा, कुरूप, निर्धन, निर्बल, निर्बुद्धि क्यों बनाता है ? और किसी को सुन्दर, पूर्णांग, धनवान, बलवान, विद्वान् क्यों बनाता है ?

उत्तर : ईश्वर अपनी इच्छा से किसी को अच्छा या बुरा फल नहीं देता किन्तु जीवों के कर्मों के अनुरूप फल देता है ।

प्र. २३९. ईश्वर को न्यायकारी तथा दयालु दोनों गुणों वाला बताया गया है जबकि ये दोनों गुण एक दूसरे के विरूद्ध हैं । यदि न्याय करे तो दण्ड मिले, यदि दया करे तो अन्यायी बन जाए ? इसका समाधान क्या है ?

उत्तर : न्याय तथा दया शब्दों में कोई विरोध नहीं है । बुरे व्यक्ति को दण्ड देकर ईश्वर न्यायकारी बनता है और बन्धन में डालकर भविष्य में पाप करन से रोकता है अत: दयालु भी है ।

प्र. २४०. क्या कुछ ऐसे गुण भी हैं जो ईश्वर में न हों ?

उत्तर : हाँ हैं, जैसे रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, भार आदि ये गुण प्रकृति में हैं, किन्तु ईश्वर में नहीं हैं और जीव में भी नहीं हैं ।

प्र. २४१. ईश्वर कोई वस्तु/द्रव्य/पदार्थ/चीज है ?

उत्तर : हाँ, ईश्वर एक द्रव्य है, पदार्थ है, वस्तु है क्योंकि उसमे अनेक गुण हैं और वह कर्म भी करता है । वैदिक सिद्धान्त में वस्तु उसको कहा जाता है जिसमें गुण, रहते हों ।

प्र. २४२. ईश्वर को सर्वव्यापक बताया गया है तो कागज के जलने, कपड़े के फटने, रोटी के चबाने, लकड़ी के छीलने, लोहे के पीटने पर वह भी जलता, फटता, चबाया, छीलता, पीटा जाता होगा ?

उत्तर : नहीं, क्योंकि ईश्वर जलने, फटने, कटने वाली जड़ वस्तुओं से अलग है । उनके जलने, फटने, कटने पर भी उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है क्योंकि वह जड़ नहीं किन्तु चेतन है ।

प्र. २४३. ईश्वर पापों को क्षमा करता है ? यदि नहीं तो क्यों ? क्षमा कर दे तो क्या हानि होगी ?

उत्तर : यदि ईश्वर मनुष्यों के पापों को क्षमा कर दे तो वह अन्यायकारी बन जाये, साथ ही संसार में पाप कर्म भी बढ़

जाये, इसलिए वह पापों को क्षमा नहीं करता है ।

प्र. २४४. ईश्वर कर्मों का फल तत्काल क्यों नहीं देता ? बाद में देरी से देवे तो मनुष्यों के मन में कर्मफल के विषय में शंका/अनास्था/अश्रद्धा/अविश्वास उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर : ईश्वर अपने नियमानुसार समय पर ही कर्मों का फल देता है, पूर्व नहीं, जैसे कि फल, फूल, अन्न आदि समय पर उत्पन्न होते हैं ।

प्र. २४५. ईश्वर की उपासना करने वाले आस्तिक व्यक्ति संसार में दु:खी दीन, हीन, निर्बल, निर्धन, पराधीन देखे जाते हैं, जबकि नास्तिक व्यक्ति सुखी, सम्पन्न, बलवान, स्वतंत्र देखे जाते हैं, ऐसा क्यों ?

उत्तर : ईश्वर की उपासना के साथ साथ आस्तिक व्यक्तियों को धन, बल, ज्ञान, स्वास्थ्य, सुरक्षा, स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए संकल्प, पुरुषार्थ, तपस्या भी करनी चाहिए, जो ऐसा नहीं करते हैं वे आस्तिक दु:खी होते हैं, अन्य नहीं ।

प्र. २४६. ईश्वर चेतन है तो ईंट, पत्थर, सोना, चांदी आदि जड़ पदार्थों में चेतनता (चलना, फिरना, हिलना, डुलना, इच्छा, प्रयत्न) आदि क्यों नहीं देखे जाते हैं ?

उत्तर : ईंट पत्थर आदि जड़ पदार्थों में चेतन ईश्वर रहता है किन्तु ईंट, पत्थर आदि में जीवात्मा न होने से वे चलते फिरते नहीं हैं, ईश्वर अपनी चेतनता को अपने अधिकार में रखता है इसलिए जड़ पदार्थों में चलना फिरना आदि गति नहीं होती है।

प्र. २४७. ईश्वर स्वयं न हिलता हुआ अन्यों (संसार के पदार्थों को) कैसे हिलाता है ?

उत्तर : ईश्वर में चुम्बकीय सी शक्ति है, इसी शक्ति से वह स्वयं न हिलता हुआ संसार के जड़ पदार्थों को हिला देता है।

प्र. २४८. क्या ईश्वर संसार में किसी स्थान विशेष में, किसी काल विशेष में, किसी समुदाय विशेष में, किसी जीव विशेष को उनका कल्याण करने के लिए और दुष्टों का नाश करने के लिए भेजता है ?

उत्तर : नहीं, ईश्वर किसी स्थान, काल, समुदाय विशेष में किसी जीव विशेष को नहीं भेजता है । ऐसा करे तो वह सर्वहितकारी नहीं रहेगा, पक्षपाती, अन्यायकारी बन जायेगा सर्वहितकारी नहीं रहेगा, पक्षपाती अन्यायकारी बन जायेगा।

प्र. २४९. क्या ईश्वर जीवों के भविष्य की बातों को जानता है कि वह कब, कहाँ, किसके साथ क्या करेगा ?

उत्तर : नहीं, ईश्वर जीवों के भविष्य की सब बातों को नहीं जानता है। हाँ, जीवों के मन में जो संकल्प/इच्छा आदि उत्पन्न होते हैं। उनको तो जान लेता है ।

प्र. २५०. ईश्वर सर्वज्ञ है, आनन्द स्वरूप है तथा सर्वव्यापक है इसलिए वह सभी जीवों के अन्दर भी है तो फिर सब जीव ईश्वर के सम्पर्क के कारण सर्वज्ञ, आनन्द की अनुभूति क्यों नहीं करते हैं ?

उत्तर : ईश्वर का आनन्द अपने अधिकार में है । वह जिस को योग्य/पात्र समझता है, उसे ही अपना आनन्द प्रदान करता है । अयोग्य को नहीं प्रदान करता है ।

प्र. २५१. ईश्वर सर्वव्यापक होने से शौचालय में विद्यमान मलमूत्र में भी उपस्थित है तो फिर उसे दुर्गन्ध की अनुभूति भी होती होगी ?

उत्तर : ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, वह मल आदि दुर्गन्ध का ज्ञान करते हुवे भी उससे दु:खी या विचलित नहीं होता है। किन्तु अपने बल से उसे रोक देता है।

प्र. २५२. क्या ईश्वर सब कुछ कर सकता है ? क्योंकि उसे सर्वशक्तिमान् कहा गया है।

उत्तर : ईश्वर सब कुछ नहीं कर सकता, अपने को मार नहीं सकता या अपने जैसा दूसरा ईश्वर नहीं बना सकता। सर्वशक्तिमान् का अर्थ है, हो सकने वाले कार्यों को ईश्वर अपनी ही शक्ति से पूर्ण कर लेता है , वह असंभव कार्यों को नहीं करता है। प्रकृति की सहायता लेकर कर सकता है, असंभव कार्यों को नहीं।

प्र. २५३. क्या ईश्वर अपने भक्त उपासक के वश में भी हो जाता है ? अर्थात् जैसा भक्त चाहे वैसा ईश्वर करे, ऐसा भी होता है ?

उत्तर : नहीं, ईश्वर भक्त के वश में नहीं होता है। बल्कि भक्त ईश्वर के वश में रहना चाहता है।

प्र. २५४. क्या ईश्वर की भक्ति, प्रार्थना, ध्यान, उपासना किन्हीं विशेष मन्त्रों, सूत्रों, श्लोकों द्वारा ही की जा सकती है, अपनी भाषा में इच्छानुसार नहीं की जा सकती ?

उत्तर : अपनी भाषा से भी की जा सकती है, किन्तु मन्त्र आदि के माध्यम से संक्षेप में, सरलता से, उत्तम रीति से की जा सकती है।

प्र. २५५. ईश्वर एक है किन्तु उसके रूप अनेक हैं क्या यह बात सत्य है ? अर्थात् एक ही ईश्वर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश, देवी आदि अनेक रूपों वाला है ?

उत्तर : ईश्वर के रूप (देवी देवता के रूप) अनेक नहीं हैं। वह तो अरूप, = निराकार है, किन्तु गुण कर्म स्वभाव के अनुसार नाम तो अनेक हैं।

प्र. २५६. एक की बजाए अनेक ईश्वर क्यों न मान लिये जाएँ ? ऐसा करने से सभी मत पंथ संप्रदाय वाले भी संतुष्ट हो जायेंगे।

उत्तर : जब ईश्वर एक ही है तो अनेक मानना झूठ होगा। साथ ही इन अनेक ईश्वर वालों के परस्पर झगड़े होंगे कि मेरा ईश्वर बडा है, उसका छोटा है।

प्र. २५७. ईश्वर की प्रार्थना उपासना करने से क्या–क्या लाभ होते हैं ?

उत्तर : ईश्वर की उपासना करने से समाधि अवस्था में विशेष ज्ञान, बल, आनन्द, धैर्य, सहनशक्ति, उत्साह, पराक्रम, निष्कामता आदि गुणों की प्राप्ति होती है। साथ ही मनुष्य, आत्मा का साक्षात्कार करता है तथा उसके अविद्या आदि दोष नष्ट होते हैं।

प्र. २५८. क्या ईश्वर कर्मफल देने में अन्य जीवों की सहायता लेता है ?

उत्तर : नहीं, ईश्वर कर्म फल देने में अन्य जीवों की सहायता नहीं लेता।

प्र. २५९. क्या उपासना करने वाले व्यक्ति को ईश्वर वास्तव में दिखाई देता है ?

उत्तर : दिखाई देता है अर्थात् उसको ईश्वर की अनुभूति होती है। जैसा ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, आनन्द स्वरूप, न्यायकारी, सर्वव्यापक आदि गुणों वाला है । वैसा ही उसे अनुभव में आता है । साथ ही ईश्वर के आनन्द की अनुभूति भी वह करता है । इसे ही दिखाई देना समझना चाहिए ।

प्र. २६०. ईश्वर अपने उपासकों की रक्षा कैसे करता है ? उसकी रक्षा करने का तरीका, विधि, ढंग क्या है ?

उत्तर : ईश्वर अपने उपासक को आपत्ति, कठिनाई, विरोध बाधा आदि प्रतिकूलता उपस्थित होने पर उत्साह, बल, ज्ञान, पराक्रम, धैर्य, सहनशक्ति आदि गुणों को प्रदान करके समस्याओं से दु:खी होने से बचाता है । यही उसकी रक्षा है ।

प्र. २६१. क्या ईश्वर अपनी ही इच्छा से किसी व्यक्ति विशेष को धन, बल, प्रतिष्ठा, सम्मान, सफलता, सुख देता है ?

उत्तर : ईश्वर अपनी इच्छा से किसी व्यक्ति विशेष को धन, बल, प्रतिष्ठा, सम्मान, सफलता, सुख नहीं देता है । ऐसा करे तो वह अन्यायकारी हो जाये ।

प्र. २६२. किसी व्यक्ति ने ईश्वर का प्रत्यक्ष किया है, इस बात का पता कैसे लगाया जा सकता है ?

उत्तर : जो व्यक्ति ईश्वर का प्रत्यक्ष करता है उसके जीवन, वाणी, व्यवहार में ईश्वरीय गुण अर्थात् आनन्द, शान्ति, निर्भीकता, सच्चाई, परोपकार, निष्पक्षता, निष्कामता आदि प्रतीत होते हैं। वह दु:खी, चिन्तित, रागी, द्वेषी, पक्षपाती नहीं बनता है।

प्र. २६३. क्या ईश्वर अपने भक्तों उपासकों से बातचीत भी करता है ? शंका–समाधान करता है ? निर्देश भी करता है ? प्रेरणा देता है ?

उत्तर : हाँ, ईश्वर समाधि अवस्था में अपने उपासकों से बातचीत भी करता है तथा उनकी शंकाओं का समाधान भी करता है।

प्र. २६४. क्या ईश्वर मकान, रोटी आदि बना सकता है ?

उत्तर : हाँ, परन्तु ईश्वर ने वस्तुओं के निर्माण की सीमा निर्धारित कर रखी है इसलिए वह इन पदार्थों को नहीं बनाता । ये कार्य जीवों के कर्मों की सीमा के अन्तर्गत आते हैं ।

प्र. २६५. जब ईश्वर अनन्त है, उसे पूरा तो हम जान ही नहीं सकते, तो उसे जानने का प्रयत्न ही क्यों करें ?

उत्तर : जैसे नदी का पूरा पानी हम नहीं पी सकते फिर भी अपनी अवश्यकतानुसार थोड़ा सा पानी हम नदी से लेकर पी लेते हैं। ठीक ऐसे ही ईश्वर को जितना जानने से मोक्ष हो जाए उतना तो अवश्य ही जानना चाहिए ।

प्र. २६६. ईश्वर दयालु कैसे है ?

उत्तर : दयालु का अर्थ है दया के स्वभाव वाला । दया का अर्थ है दूसरे के हित, उन्नति, कल्याण और सुख चाहना । ईश्वर की सबसे बड़ी दया यह है कि उसने जीवों की उन्नति, सुख के लिए सृष्टि के उत्तम पदार्थ बनाकर दान में दे रखे हैं । ईश्वर की दया का एक स्वरुप यह भी है कि वह सहायता चाहने वाले पुरुषार्थी मनुष्य की सहायता करता है ।

प्र. २६७. क्या ईश्वर को उसके कर्मों का फल मिलता है ?

उत्तर : जी हाँ, ईश्वर के कर्मों का फल यही है कि उसके कार्य

पूर्ण हो जाते हैं, अटकते नहीं ।

प्र. २६८. क्या संसार में हिंसा, छल, कपट, भूकम्प आदि जो होते हैं वह ईश्वर कर रहा है ?

उत्तर : नहीं, जीव स्वतन्त्र हैं, उनके कारण भी अनेक अव्यवस्था, दु:ख सृष्टि में फैलाये जाते हैं। पृथ्वी आदि पदार्थों में भी स्वभाव से परिवर्तन, टूट–फूट आदि होती रहती है। यह ईश्वर की ओर से नहीं है ।

प्र. २६९. जिस स्थान पर एक ईंट है, उसके स्थान पर दूसरी ईंट नहीं आ सकती । इस सृष्टि में प्रकृति व जीव भी हैं तो सर्वव्यापक ईश्वर उनके स्थान पर कैसे आ सकता है ?

उत्तर : जड़ पदार्थ स्थान घेरते हैं। इसलिए एक ईंट के स्थान पर दूसरी ईंट नहीं आ सकती है। परन्तु चेतन पदार्थ (जीव व ईश्वर) स्थान नहीं घेरते है। इसलिए ईश्वर जड़ पदार्थ प्रकृति व जीवों के साथ एक ही स्थान पर रहता है ।

प्र. २७०. मनुष्य ईश्वर की ओर कब झुकता है ?

उत्तर : रोग, वियोग होने पर, सांसारिक भोगों से अतृप्ति होने पर, भयंकर संकट आने पर या धर्म का उपदेश सुनने पर मनुष्य ईश्वर की ओर आकर्षित होता है ।

प्र. २७१. ईश्वर आँखों से दिखाई नहीं देता इसलिए उसकी सत्ता नहीं है । क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर : नहीं, संसार में अनेक पदार्थ हैं जो आँखों से दिखाई नहीं

देते फिर भी लोग उन्हें मानते हैं। जैसे वायु, भूख, प्यास, सुख, दु:ख, मन, बुद्धि, विद्युत् तरङ्गें इत्यादि ।

प्र. २७२. बालक के शरीर को माता-पिता बनाते हैं, ईश्वर नहीं । क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर : नहीं, यदि बालक का शरीर माता–पिता ने बनाया होता तो उन्हें शरीर की रचना का पूरा–पूरा ज्ञान होता परन्तु ऐसा नहीं होता । वैज्ञानिक भी आज तक मनुष्य शरीर को पूरा–पूरा नहीं जान पाए ।

प्र. २७३. ईश्वर शरीर धारण नहीं करता, इसमें वेद का क्या प्रमाण है ?

उत्तर : यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के आठवें मन्त्र में ईश्वर को 'अकायम्' अर्थात् शरीर रहित कहा है ।

प्र. २७४. कहते हैं कि ब्रह्मा ने सृष्टि को उत्पन्न किया, विष्णु सृष्टि का पालन कर रहे हैं व महेश सृष्टि का संहार करते हैं । क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर : नहीं, ब्रह्मा, विष्णु और महेश एक ईश्वर के नाम हैं और वही सृष्टि की उत्पत्ति, पालन व संहार करते हैं ।

प्र. २७५. संसार में वैर, विरोध का सबसे बड़ा कारण क्या है ?

उत्तर : अनेक मत, सम्प्रदाय आदि का होना संसार में वैर, विरोध का सबसे बड़ा कारण है । जिन्होंने ईश्वर के वास्तविक स्वरूप के स्थान पर मिथ्या स्वरूपों की कल्पना कर रखी हैं ।

प्र. २७६. निराकार ईश्वर का प्रत्यक्ष (साक्षात्कार) करना क्या है ?

उत्तर : निराकार ईश्वर के ज्ञान, आनन्द आदि गुणों की अनुभूति करना ही उसका प्रत्यक्ष या साक्षात्कार करना है ।

प्र. २७७. ईश्वर को प्राप्त करने के रास्ते अलग-अलग हैं किंतु मंजिल सबकी एक हैं, क्या यह मान्यता ठीक है ?

उत्तर : जी नहीं, यह मान्यता ठीक नहीं है क्योंकि । आज अनेक प्रकार की पूजा-पद्धति, कर्मकाण्ड, धार्मिक ग्रंथ प्रचलित हैं अर्थात् ईश्वर को प्राप्त करने के अलग-अलग रास्ते, अलग-अलग उपाय बताये जा रहे हैं तथा इनकी मंजिल भी अलग अलग हैं। जैसे किसी की मंजिल सातवाँ आसमान, किसी की चौथा आसमान, तो किसी की मंजिल परम धाम तो किसी की अक्षरधाम, तो किसी की गोलोक, वैकुण्ठ लोक या कैलाश है । तो सबकी मंजिल एक कहाँ हुई ?

प्र. २७८. व्यक्ति सच्चा और पूर्ण आस्तिक कब बनता है ?

उत्तर : सत्य का पालन, चोरी का त्याग, धैर्य, प्रेम पूर्वक व्यवहार, निष्पक्षता, दया, क्षमा, संयम, निष्कामता आदि उत्तम गुणों को धारण करने से व्यक्ति सच्चा व पूर्ण आस्तिक बनता है ।

यज्ञ

प्र. २७९. यज्ञ किसे कहते हैं ? यज्ञ की परिभाषा क्या है ?

उत्तर : यज्ञ का सामान्य अर्थ है दान देना, त्याग करना तथा वस्तुओं का ठीक ठीक उपयोग लेना ।

प्र. २८०. यज्ञ कुण्ड विशेष आकार का ही क्यों बनाया जाता हैं, किसी भी पात्र में यज्ञ क्यों नहीं होता ?

उत्तर : विशेष प्रकार के यज्ञ कुण्ड में अग्नि का तापमान अधिक बनता है तथा घी और सामग्री शीघ्रता से जलते हैं और अति सूक्ष्म आकार लेते हैं ।

प्र. २८१. यज्ञ के लिए समिधायें (लकड़ी) पीपल, बरगद, आम, गूलर आदि कुछ विशेष वृक्षों की ही क्यों प्रयोग की जाती हैं ? किसी भी वृक्ष की लकड़ी से यज्ञ करने में क्या हानि है ?

उत्तर : पीपल, आम आदि विशेष समिधाओं के जलाने से कार्बन डाई ऑक्साइड आदि हानिकारक गैसें बहुत कम बनती हैं और कोयले व राख भी कम बनते हैं ।

प्र. २८२. यज्ञ में गाय के घी का ही प्रयोग क्यों होता है ? भैंस, बकरी, ऊंटनी का या वनस्पति घी या तेल का प्रयोग क्यों नहीं होता ?

उत्तर : क्योंकि गाय के घी को जलाने से विशेष गैसें बनती हैं जो आकाश में स्थित प्रदूषण को शीघ्र ही अधिक मात्रा में नष्ट कर देती हैं। अन्य किसी घी या तेल में यह शक्ति नहीं होती हैं ।

प्र. २८३. यज्ञ सूर्योदय के पश्चात् तथा सायं सूर्यास्त से पूर्व ही क्यों करते हैं रात्रि में यज्ञ क्यों नहीं करना चाहिये ?

उत्तर : सूर्य की किरणें, यज्ञ द्वारा उत्पन्न विशेष रोग विनाशक गैसों को ऊपर आकाश में ले जाकर फैला देती हैं, यह कार्य रात में नहीं हो सकता है ।

प्र. २८४. यज्ञ करने से पूर्व आचमन व अंग स्पर्श (जल से) क्यों करते हैं ?

उत्तर : जल का आचमन करने से शरीर में पवित्रता होती है तथा पवित्र विचार भी उत्पन्न होते हैं ।

प्र. २८५. यज्ञ एक भौतिक क्रिया है तो इसमें मंत्रों का उच्चारण क्यों किया जाता है ?

उत्तर : मंत्रों के बोलने से यज्ञ के लाभों, परिणामों, प्रभावों का पता चलता है तथा मंत्रों पर विचार करने से आत्मा में शुद्धता आती है ।

प्र. २८६. क्या यज्ञ करने से जो धुंआ उत्पन्न होता है उससे वायु प्रदूषण नहीं होता हैं ?

उत्तर : यज्ञ से थोड़ा सा प्रदूषण हो सकता है किन्तु यज्ञ द्वारा निर्मित विशेष वायु अनेक प्रकार के रोगों के कीटाणुओं का नाश करती है ।

प्र. २८७. यज्ञ में घी के साथ सामग्री (जड़ी बूटियों) की भी आहुति क्यों दी जाती है ?

उत्तर : सामग्री जलाने से अलग लाभ होते हैं तथा घी जलाने से अलग लाभ होते हैं ।

प्र. २८८. यज्ञ की सामग्री में क्या क्या पदार्थ होते हैं ?

उत्तर : यज्ञ की सामग्री में मुख्य रूप से सुगन्धित, रोगनाशक, पुष्टिकारक तथा मधुर पदार्थ होते हैं ।

प्र. २८९. 'स्वाहा' शब्द का अर्थ क्या है ?

उत्तर : स्वाहा शब्द के निम्न अर्थ होते हैं –

(१) सत्य बोलना (२) मधुर बोलना (३) अपनी वस्तु को अपनी कहना (४) जैसा मन में हो वैसा ही वाणी से बोलना, तथा कर्म करना। (५) परिवार समाज राष्ट्र के लिए अपना सर्वस्व आहुत करने की योग्यता बनाना तथा (६) घी, सामग्री को अग्नि में डालना ।

प्र. २९०. तीन समिधाओं को विशेष रूप से घी में डुबोकर क्यों आहुति दी जाती है ।

उत्तर : समिधाओं को घी में डूबोकर जलाने से वे शीघ्र जलती हैं।

प्र. २९१. क्या यज्ञ से आध्यात्मिक–मानसिक लाभ भी होते हैं ?

उत्तर : हाँ, यज्ञ करने से शारीरिक स्वास्थ्य लाभ, त्याग की भावना प्रसन्नता, पवित्रता आदि गुणों की प्राप्ति होती है ।

प्र. २९२. यज्ञ करते समय घी की आहुति कभी उत्तर भाग में कभी दक्षिण में कभी मध्य में देते हैं, ऐसा क्यों किया जाता है ?

उत्तर : ऐसा इसलिए किया जाता है कि जिससे सभी समिधाओं पर समान रूप से घी पड़े तथा वे ठीक प्रकार से जल जाएँ।

प्र. २९३. क्या यज्ञ करना सबके लिए अनिवार्य है ?

उत्तर : शास्त्रों में यज्ञ करना सबके लिए अनिवार्य बताया गया है, चाहे थोड़ा करें या अधिक करें ।

प्र. २९४. यज्ञ में, हवन में, अग्निहोत्र में, होम में क्या भेद है ?

उत्तर : अग्निहोत्र का अर्थ है हवन कुण्ड में धृत सामग्री जलाना। हवन और होम, अग्निहोत्र के ही पर्यायवाची शब्द हैं किन्तु यज्ञ शब्द का अर्थ विस्तृत है, जिसका अर्थ है ईश्वर की आज्ञा के अनुसार प्रत्येक शुभ कार्य को निष्काम भावना से पुरुषार्थ, त्याग, तपस्या पूर्वक करना, जिससे परिवार समाज राष्ट्र तथा विश्व को सुख, शान्ति, समृद्धि की प्राप्ति हो ।

प्र. २९५. क्या यज्ञ करने का अधिकार केवल ब्राह्मण को ही होता है या कोई भी व्यक्ति यज्ञ कर सकता है ?

उत्तर : यज्ञ करने का अधिकार सभी मनुष्यों को है। केवल ब्राह्मणों को ही नहीं है ।

प्र. २९६. यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म क्यों कहा गया है ?

उत्तर : थोड़े से धन, थोड़े से साधन तथा थोड़े से समय में हजारों प्राणियों को जीवनदायी, रोगनाशक भेषज (औषधीय) वायु की प्राप्ति होती है। इसलिए यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म कहा गया है।

प्र. २९७. छोटे से यज्ञ कुण्ड़ में थोड़े से घी व सामग्री से गांवों, नगरों में फैला भयंकर प्रदूषण कैसे दूर हो सकता है ?

उत्तर : जैसे थोड़े से पोटेशियम साईनाइड से सैकड़ों, हजारों व्यक्तियों का जीवन नष्ट हो जाता है वैसे ही थोड़े से घी, सामग्री से सैकड़ों हजारों व्यक्तियों को जीवन मिलता है।

प्र. २९८. अगरबत्ती, धूप, इत्र, सेन्ट, फूल आदि से वातावरण को शुद्ध किया जा सकता है तो फिर यज्ञ की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर : अगरबत्ती आदि से मात्र सुगन्धी उत्पन्न होती है किन्तु रोगों के कीटाणु नष्ट नहीं होते हैं। न वायु शुद्ध होती है ।

प्र. २९९. क्या यज्ञ करने से यज्ञकर्त्ता की सभी मनोकामना पूरी होती है ?

उत्तर : यज्ञ के साथ पुरुषार्थ भी अपेक्षित है, मात्र अग्निहोत्र से मनोकामना पूर्ण नहीं होती है ।

प्र. ३००. क्या यज्ञकर्त्ता को यज्ञ करते समय विशेष वस्त्रों को धारण करना चाहिए ?

उत्तर : यह आवश्यक नहीं है, चाहे तो कर सकते हैं ।

प्र. ३०१. क्या अपने व्यक्तिगत यज्ञ को किसी अन्य व्यक्ति को सौंप कर उससे करवा सकते हैं ?

उत्तर : हाँ, यदि समय न हो तो अन्यों से करवा सकते हैं किन्तु व्यक्तिगत यज्ञ करने से जो लाभ होते हैं, वह नहीं मिल पाते हैं ।

प्र. ३०२. यज्ञ से पूर्व संकल्प पाठ क्यों करते हैं ?

उत्तर : काल गणना करने के उद्देश्य से संकल्प पाठ किया जाता है। यज्ञ कर्त्ता शुभ कर्म कर रहा है ऐसी भावना भी मन में उत्पन्न होती है ।

प्र. ३०३. दीपक को वेदी के उत्तर में तथा जल को पूर्व दिशा में क्यों रखा जाता है ?

उत्तर : यह मात्र एक व्यवस्था है, सुविधा के लिए ।

प्र. ३०४. क्या यज्ञ द्वारा इच्छित समय एवं इच्छित स्थान पर वर्षा करायी जा सकती है या अधिक वर्षा को बन्द या कम किया जा सकता है ?

उत्तर : हाँ, ऐसा विधान शास्त्रों में है, किन्तु वर्तमान में इस विद्या के जानने वाले कम हैं ।

प्र. ३०५. क्या अग्नि जलाने के लिये लकड़ी के स्थान पर गोबर के कण्डों का प्रयोग किया जा सकता है ?

उत्तर : अग्नि जलाने के लिये लकड़ी के स्थान पर गोबर के कण्डों का प्रयोग नहीं करना चाहिए ।

प्र. ३०६. कौन व्यक्ति यज्ञ कर्म को छोड़ सकता है ?

उत्तर : संन्यासी विरक्त व्यक्ति को यज्ञ करना आवश्यक नहीं होता है क्योंकि उसका जीवन ही यज्ञमय होता है ।

प्र. ३०७. क्या मन्त्रों के अर्थों को जाने बिना भी यज्ञ करने से लाभ होता है ?

उत्तर : मन्त्रों के अर्थों को जाने बिना भी यज्ञ करने से भौतिक लाभ तो होगा ही, किन्तु मन्त्रों के अर्थों को जानकर जो मानसिक, बौद्धिक लाभ होता है, वह नहीं होगा ।

प्र. ३०८. क्या यज्ञ करने से शारीरिक, मानसिक रोग भी दूर होते हैं ?

उत्तर : हाँ । यज्ञ करने से शारीरिक, मानसिक रोग भी दूर होते हैं।

प्र. ३०९. क्या बिना ही घी के या बिना ही सामग्री के यज्ञ हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, यदि घी या सामग्री उपलब्ध न हो तो अन्य पदार्थों से यथा औषधि, अन्न, वनस्पति आदि से भी यज्ञ किया जा सकता है ।

प्र. ३१०. यज्ञ कुण्ड में बची राख का क्या उपयोग होता है ?

उत्तर : राख को खेत, खलिहान, उद्यान, फूलों, फलों, सब्जियों के

स्थान पर डालना चाहिए । यह एक उत्तम खाद का कार्य करती है ।

प्र. ३११. यज्ञ एक भौतिक कार्य है तो इसके साथ ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना के मन्त्रों को क्यों बोला जाता है ? वेद मन्त्रों को बोलने की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर : इससे ईश्वर के प्रति श्रद्धा, विश्वास, प्रेम उत्पन्न होता है तथा कृतज्ञता भी प्रकट होती है एवं प्रेरणा भी मिलती है।

प्र. ३१२. क्या यज्ञ में पशु बलि, पक्षी बलि, या मांस, शराब आदि प्रदान करने का विधान है ?

उत्तर : नहीं, यज्ञ को हिंसा रहित कर्म कहा गया है। इसमें मांस आदि अपवित्र हिंसा युक्त पदार्थों को प्रदान नहीं किया जाता है।

प्र. ३१३. गोमेध, अश्वमेध आदि का क्या अर्थ है, क्या इन यज्ञों में गाय की या घोड़े की बलि दी जाती है ?

उत्तर : गोमेध का अर्थ है – शरीर इन्द्रियों आदि को बलवान पुष्ट बनाना तथा अश्वमेध का अर्थ है – राष्ट्र को समृद्ध, सुसंस्कृत, सुखी, सम्पन्न बनाने के लिए उत्तम कार्यों को करना । इन यज्ञों में गाय की या घोड़े की बलि नही दी जाती है ।

प्र. ३१४. क्या स्त्री व शूद्र भी यज्ञ कर सकते हैं ?

उत्तर : हाँ, स्त्री व शूद्र भी यज्ञ कर सकते हैं ।

प्र. ३१५. यज्ञ में कहीं, कभी, किसी स्थिति में पाप-हिंसा होती है ?

उत्तर : नहीं, शास्त्रोक्त विधि अनुसार करने से यज्ञ में कहीं भी, कभी भी, किसी भी स्थिति में पाप, हिंसा नहीं होती है।

प्र. ३१६. यज्ञ कर्म सकाम कर्म की कोटि में आता है या निष्काम कर्म की कोटि में ?

उत्तर : यज्ञ कर्म दोनों प्रकार से होते हैं सकाम भी और निष्काम भी।

प्र. ३१७. क्या यज्ञ के माध्यम से मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, हराने जिताने, आदि की क्रियाएँ भी की जा सकती हैं ?

उत्तर : नहीं, यज्ञ में मारण मोहन आदि क्रियाएं नहीं होती हैं ये दुष्ट व्यक्तियों की चालाकी, धूर्तता होती है।

प्र. ३१८. क्या माचीस (दिया सलाई) के बिना केवल मंत्रों को बोलकर भी अग्नि को जलाया जा सकता है ?

उत्तर : मात्र मंत्रों को बोलकर अग्नि नहीं जलाई जा सकती है।

प्र. ३१९. क्या यज्ञ करने वाले व्यक्ति को यज्ञोपवीत धारण करना अनिवार्य है ? इसके बिना यज्ञ नहीं होता ?

उत्तर : ऋषियों ने अनुशासन बनाये रखने हेतु एक व्यवस्था बनाई है कि यज्ञोपवीत धारण करके यज्ञ करना चाहिये किन्तु यज्ञोपवीत धारण न करके यज्ञ करने से पाप नहीं होता है

प्र. ३२०. वेद के मन्त्रों की ही तरह क्या गीता, रामायण, महाभारत के श्लोकों को बोलकर भी यज्ञ किया जा सकता है ?

उत्तर : नहीं, गीता आदि ग्रन्थों के श्लोकों को बोलकर यज्ञ नहीं करना चाहिये क्योंकि गीता आदि के श्लोकों के वो अर्थ नहीं निकलते हैं जो वेदमन्त्रों के अर्थ निकलते हैं।

प्र. ३२१. घृत पात्र में यदि घी बच जावे और सामग्री के पात्र में सामग्री बच जावे तो उसका क्या करना चाहिये ?

उसे यज्ञ कुण्ड में डालें या न डालें ?

उत्तर : यदि अग्नि घी—सामग्री को जला सकती है तो डाल सकते हैं। नहीं तो पुनः पृथक घृत सामग्री पात्र में अगले दिन के लिए रख देना चाहिए।

प्र. ३२२. क्या यज्ञ कर्म को यंत्रीकरण द्वारा स्वचालित बनाकर भी सम्पन्न किया जा सकता है ?

उत्तर : हाँ, किया जा सकता है किन्तु स्वयं करने से जो लाभ होते हैं वे नहीं मिल पायेंगे।

प्र. ३२३. क्या मन्त्रों का अशुद्ध उच्चारण करने वाले यज्ञकर्त्ता को पाप लगता है या लाभ नहीं होता है या कोई हानि होती है ?

उत्तर : मन्त्र अशुद्ध बोलकर यज्ञ करने से भी भौतिक लाभ तो होता है। किन्तु मन्त्र अशुद्ध सीखकर गलत परम्परा चला देते हैं।

प्र. ३२४. जो व्यक्ति बिना ही आहुति दिये, बिना ही मंत्रों को बोले यज्ञ शाला में बैठे होते हैं उनको भी यज्ञ का लाभ होता है ?

उत्तर : हाँ होता है। उन्हें भी भेषज वायु मिलता है। मन्त्रों से प्रेरणा मिलती है। मन्त्र याद भी होते हैं।

प्र. ३२५. यज्ञ करते समय मन को कहाँ पर केन्द्रित करना चाहिये मंत्र के अर्थ पर, अग्नि पर, ध्वनि पर या अन्य स्थान पर ?

उत्तर : उत्तम तो यह है कि मन को मन्त्र के अर्थों में लगाना चाहिए

या ईश्वर में लगाना चाहिए या फिर अग्नि की लपटों में लगाना चाहिए ।

प्र. ३२६. क्या किसी पण्डित, ब्राह्मण को धन देकर अपने लाभ के लिये यज्ञ कराया जा सकता है ?

उत्तर : हाँ, धन देकर यज्ञ कराया जा सकता है । जितने धन से घृत–सामग्री आदि का यज्ञ होगा उसका तो पुण्य मिलेगा किन्तु करने का पुण्य लाभ कर्त्ता (पण्डित, ब्राह्मण) को मिलेगा ।

प्र. ३२७. यज्ञ एक समय करना चाहिये या दो समय ?

उत्तर : सामर्थ्य, साधन, समय, श्रद्धा रूचि हो तो दो समय (प्रातः व सांय) करना चाहिए ।

प्र. ३२८. पंचमहायज्ञ किसे कहते हैं ?

उत्तर : प्रत्येक गृहस्थी के लिए अनिवार्य रूप से करने योग्य पाँच कार्यों को पंचमहायज्ञ कहते हैं । जैसे – (१) ब्रह्मयज्ञ (२) देवयज्ञ (३) पितृयज्ञ (४) बलिवैश्वदेवयज्ञ (५) अतिथियज्ञ ।

प्र. ३२९. परिभाषा सहित पाँच महायज्ञों का वर्णन करो ?

उत्तर :

(१) ब्रह्मयज्ञ = नित्य प्रातः, सायं ईश्वर का ध्यान करना वेदों का स्वाध्याय करना ।

(२) देवयज्ञ = अग्निहोत्र (हवन करना) ।

(३) पितृयज्ञ = माता–पिता, सास–ससुर आदि की सेवा सुश्रुषा करना ।

(४) बलिवैश्वदेवयज्ञ = पशु–पक्षी, अनाथ, विकलांग, रोगी आदि जीवों को अन्न आदि प्रदान करना ।

(५) अतिथियज्ञ = घर में पधारे संन्यासी, विद्वान, उपदेशक आदि की सेवा–
स त् क ा र
करना उनसे उपदेश ग्रहण करना ।

संस्कार

प्र. ३३०. संस्कार किसे कहते हैं ? व कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : जिससे शरीर, मन और आत्मा उत्तम बनते हैं उसको संस्कार कहते है ।

संस्कार १६ प्रकार के होते हैं — (१) गर्भाधान (२) पुंसवन (३) सीमन्तोन्नयन (४) जातकर्म (५) नामकरण (६) अन्नप्राशन (७) निष्क्रमणम् (८) चूड़ाकर्म (९) कर्णवेध (१०) उपनयन (११) वेदारम्भ (१२) समावर्तन (१३) विवाह (१४) वानप्रस्थ (१५) संन्यास (१६) अन्त्येष्टि ।

प्र. ३३१. समाज में संन्यासियों की क्या आवश्यकता है ? क्या वे समाज पर भार रूप नहीं हैं ?

उत्तर : जैसे शरीर में शिर की आवश्यकता होती है वैसे ही समाज के सुसंचालन हेतु, धार्मिक, विद्वान्, तपस्वी, धन, मान और पुत्र/शिष्य की इच्छा का त्याग करनेवाले संन्यासियों की आवश्यकता है ।

प्र. ३३२. गर्भस्थ शिशु के शारीरिक एवं मानसिक विकास हेतु कौन से संस्कार किये जाते है ?

उत्तर : गर्भस्थ शिशु के शारीरिक एवं मानसिक विकास हेतु पुंसवन और सीमन्तोन्नयन संस्कार किये जाते है ।

प्र. ३३३. विभिन्न संस्कारों में किये जाने वाले विविध कर्मकाण्डों से क्या तात्पर्य = अर्थ होता है ?

उत्तर : विभिन्न संस्कारों में किये जाने वाले विविध कर्मकाण्डों में

संकेत अथवा प्रतीक छिपे होते हैं । आगे जीवन में कैसे चलना होता है उसका बोध मिलता है । कुछ व्रत, प्रतिज्ञाओं का भी धारण होता है । इन कर्मकाण्डों से सदाचार, शिष्टाचार सिखाया जाता है ।

प्र. ३३४. संसार में मृतक देह की अंतिम विधि के लिए कौन कौन सी पद्धतियाँ प्रचलित हैं ?

उत्तर : संसार में मृतक देह की अंतिम विधि के लिए, मुर्दे को गाड़ना, नदीं में बहाना, जंगल, पर्वत आदि स्थानों में खुला छोड़ देना तथा जलाना आदि पद्धतियाँ प्रचलित हैं ।

प्र. ३३५. इनमें से सर्वश्रेष्ठ विधि कौन सी है और क्यों ?

उत्तर : इनमें सर्वश्रेष्ठ मुर्दे को जलाना है । क्योंकि इससे जमीन, पानी, हवा आदि = पर्यावरण की बहुत ही कम हानि होती है थोड़ी सी भूमि में लाखों, करोड़ों मृतदेहों के अन्तिम संस्कार किये जा सकते हैं ।

स्वर्ग—नरक

प्र. ३३६. क्या स्वर्ग-नरक किसी स्थान विशेष का नाम है ?

उत्तर : नहीं स्वर्ग या नरक कोई स्थान विशेष का नाम नहीं है ।

प्र. ३३७. स्वर्ग का वास्तविक अर्थ क्या है ?

उत्तर : सुख विशेष की प्राप्ति को स्वर्ग कहते हैं ।

प्र. ३३८. स्वर्गलोक में इन्द्र, रुद्र, वरुण आदि देवता रहते हैं, क्या यह मान्यता सही है ?

उत्तर : नहीं, यह मान्यता सही नहीं है ।

प्र. ३३९. वास्तव में देवता किसे कहते हैं ?

उत्तर : माता, पिता गुरु, विद्वान, अतिथि आदि तथा दानी, परोपकारी, धर्मात्माओं को देवता कहते हैं ।

प्र. ३४०. नरक किसे कहते हैं ?

उत्तर : दु:ख विशेष की प्राप्ति को नरक कहते हैं ।

प्र. ३४१. नरक प्राप्ति का अर्थ क्या है ?

उत्तर : जीवन में अभाव कष्ट, दु:ख, पीडा और मरणोपरांत कीट, पतंग, सूअर, कुत्ता, बिल्ली आदि दु:खमय योनि में जन्म लेना तथा घोर दु:ख कष्ट पाना नर्क प्राप्ति कहलाती है।

प्र. ३४२. क्या कुत्ते, बिल्ली, सुअर और मनुष्य को समान सुख दु:ख है, "वह अपने शरीर में सुखी, हम अपने शरीर में" क्या यह मान्यता ठीक है ?

उत्तर : कुत्ते, बिल्ली, सूअर और मनुष्य को समान सुख-दु:ख नहीं है अपितु पशुओं को दु:ख अधिक होता है । "वह अपने

शरीर में सुखी, हम अपने शरीर में" यह मान्यता ठीक नहीं है। मनुष्यों को उत्कृष्ट बुद्धि, हाथ, वाणी ये विशेष उपलब्ध है जिससे वे अधिकाधिक मुख प्राप्त कर सकते हैं। जबकि पशु आदि को विशेष साधन न होने से व इनकी स्वतंत्रता की सीमा होने से इन्हें दु:ख अधिक होता है ।

प्र. ३४३. स्वर्ग प्राप्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर : धन, ऐश्वर्य से सम्पन्न विद्वान माता-पिता के यहां जन्म लेना तथा विशेष सुख, शांति, आनन्द उत्साह, निर्भयता आदि को प्राप्त करना स्वर्गप्राप्ति कहलाती है ।

प्र. ३४४. स्वर्ग प्राप्ति के साधन कौन कौन से हैं ?

उत्तर : पंचमहायज्ञ का अनुष्ठान करना, विद्या अध्ययन करना, दान करना, पुण्य करना आदि स्वर्ग प्राप्ति के साधन हैं ।

प्र. ३४५. नरक प्राप्ति के कारण क्या हैं ?

उत्तर : भ्रष्टाचार, व्यभिचार, मांसाहार, चोरी, झूठ कपट आदि अशुभ कर्म नरक प्राप्ति के कारण हैं ।

प्र. ३४६. स्वर्ग और नरक की प्राप्ति क्या इसी जन्म में भी हो सकती है ?

उत्तर : हाँ, स्वर्ग और नरक की प्राप्ति इसी जन्म में भी हो सकती है। जीते जी दु:ख, अभाव, बन्धन, भय पीडा, रोग, वियोग आदि की प्राप्ति नरक और उत्तम स्वास्थ्य, धन सम्पति, ऐश्वर्य, सुख शान्ति की प्राप्ति स्वर्ग कहलाती है ।

श्राद्ध तर्पण

प्र. ३४७. श्राद्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर : जीवित माता-पिता गुरु, विद्वान आदि की सेवा करना श्राद्ध कहलाता है ।

प्र. ३४८. क्या माता-पिता की मृत्यु के बाद दान-पुण्य, भोज आदि कर्मों को करना उनका श्राद्ध होता है ?

उत्तर : जी नहीं, माता-पिता की मृत्यु के बाद दान-पुण्य, भोज आदि कर्मों को करने से उनका श्राद्ध नहीं होता ।

प्र. ३४९. क्या माता-पिता के मरणोपरांत उन्हें पिण्ड दान करना वेदोक्त है ?

उत्तर : जी नहीं, माता-पिता के मरणोपरांत उन्हें पिण्ड दान वेदोक्त नहीं है ।

प्र. ३५०. क्या मृत व्यक्ति का अस्थि विसर्जन करने गंगा आदि नदियों में जाना उचित नहीं है ?

उत्तर : जी नहीं, मृत व्यक्ति का अस्थि विसर्जन करने गंगा आदि नदियों में जाना उचित नहीं है । इससे इन नदियों का जल प्रदूषित होता है ।

प्र. ३५१. क्या गंगा स्नान करने से, कुंभ मेले में स्नान से पाप धुल जाते हैं ?

उत्तर : जी नहीं, गंगा-स्नान करने या कुंभ आदि मेले में स्नान करने से पाप नहीं धुलते हैं ।

प्र. ३५२. तर्पण का अर्थ क्या है ?

उत्तर : बड़े वृद्धों को खिला-पिलाकर तृप्त करना तर्पण कहलाता है ।

प्र. ३५३. क्या स्नान करते समय सूर्य देवता को पानी चढ़ाने से यह जल उन तक पहुँचता है ?

उत्तर : नहीं, स्नान करते समय सूर्य देवता को पानी चढ़ाने से यह जल सूर्य तक नहीं पहुँचता है ।

प्र. ३५४. क्या ब्राह्मणों को भोजन कराने से मृत व्यक्ति का तर्पण होता है ?

उत्तर : नहीं, ब्राह्मणों को भोजन कराने से मृत व्यक्ति का तर्पण नहीं होता है ।

प्र. ३५५. क्या मृत व्यक्ति की स्वर्ग प्राप्ति के लिए ब्राह्मणों को गाय आदि दान देना उचित है ?

उत्तर : नहीं, मृत व्यक्ति की स्वर्ग प्राप्ति के लिए ब्राह्मणोंकी गाय, सोना आदि दान देना उचित नहीं है ।

प्र. ३५६. गया श्राद्ध का वास्तविक अर्थ क्या है ?

उत्तर : अत्यंत श्रद्धापूर्वक विद्वान् अतिथि, आचार्य, माता-पिता तथा सन्तानों का पालन करना गया श्राद्ध कहलाता है ।

भ्रम-निवारण

प्र. ३५७. पीपल पेड़ के चारों ओर धागा बाँधने से व उसके फेरे करने से कन्याओं को मनचाहा वर मिलता है तथा पति देव की आयु बढ़ती है क्या मान्यता उचित हैं ?

उत्तर : जी नहीं, पीपल पेड़ पर धागा बाँधने, उसके फेरे करने से कन्याओं को मनचाहा वर मिलता व पति देव की आयु बढ़ती है यह मान्यता शास्त्र सम्मत नहीं है अपितु सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है, असत्य है ।

प्र. ३५८. साधु, पीर या फकीर के मजार पर जाकर मनौती मांगने से इच्छाएँ पूर्ण होती हैं क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर : जी नहीं, साधु, पीर या फकीर के मजार पर जाकर मन्नत माँगने से मन्नत पूरी होती हैं यह मान्यता अवैदिक तथा असत्य है ।

प्र. ३५९. 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' क्या यह सिद्धान्त ठीक है ?

उत्तर : जी नहीं, यह सिद्धान्त ठीक नहीं है, वेद विरुद्ध है ।

प्र. ३६०. शीतला माता, संतोषी माता आदि का व्रत करने से अथवा सोलह सोमवार आदि का व्रत करने से पुत्र-रत्न की प्राप्ति होती है, क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर : जी नहीं, यह बात अवैदिक, अनुचित तथा अंधविश्वास है।

प्र. ३६१. संतान के जन्म होने पर जन्मकुंडली, जन्मपत्री आदि बनाते हैं क्या इससे संतान के भविष्य का ज्ञान होता है ?

उत्तर : जी नहीं, जन्मकुंडली, जन्मपत्री बनाना आदि बातें काल्पनिक

हैं। इससे भविष्य का ज्ञान होता है यह मान्यता अवैदिक है।

प्र. ३६२. भूत प्रेत का जो वर्तमान स्वरूप प्रचलित है क्या इनकी वास्तव में सत्ता है ?

उत्तर : नहीं, यह काल्पनिक कथाएँ होती हैं वास्तव में अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए धन कमाने के लिए ही भूत प्रेत की कथा बना दी जाती है, जो सर्वथा मिथ्या है ।

प्र. ३६३. देवी-देवताओं के मंदिरों में पैदल जाने से देवी-देवता प्रसन्न होते हैं तथा घुटनों के बल पर या रेंगकर जाने से अति प्रसन्न होकर मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर : जी नहीं, यह बात सर्वथा मिथ्या व अंधविश्वास है ।

प्र. ३६४. ट्रक आदि वाहन के पीछे पुराना जूता लटकाने से दुर्घटना टल जाती है, क्या यह मानना ठीक है ?

उत्तर : नहीं, ऐसा मानना ठीक नहीं है क्योंकि दुर्घटना से बचने के लिए सजग, सावधान रहते हुए यातायात के नियमों (Traffic-rules) का पालन और दूरदृष्टि रखते हुए वाहन चलाना आवश्यक है न कि जूता लटकाना ।

प्र. ३६५. घर या दुकान के सामने नींबू व मिर्च टांगने से आने वाली विपत्तियाँ टल जाती हैं, क्या यह मान्यता उचित है ?

उत्तर : जी नहीं, घर या दुकान के सामने नींबू व मिर्च टांगने मात्र से विपत्तियाँ नहीं टलती हैं ।

प्र. ३६६. क्या जादू-या टोना-टोटका करने से संकट अथवा विघ्न विपत्तियाँ टल जाती हैं ?

उत्तर : जी नहीं, किसी प्रकार के भी जादू टोना-टोटका से विपत्तियाँ नहीं टलती हैं ।

प्र. ३६७. क्या ज्योतिष शास्त्र के अनुसार हाथ देखकर भविष्य की घटनाओं को बताना सत्य होता है ?

उत्तर : नहीं सच्चे ज्योतिष शास्त्र में कहीं भी हाथ देखकर भविष्य की घटनाओं को बताना, आयुनिर्धारण करना आदि नहीं लिखा है ।

प्र. ३६८. ज्योतिष शास्त्र से वास्तविक लाभ क्या होता है ?

उत्तर : ज्योतिष शास्त्र से सूर्यग्रहण, चंद्रग्रहण की स्थिति तथा विभिन्न ग्रह-उपग्रहों की गति एवं स्थिति का परिज्ञान होता है।

प्र. ३६९. शनि-मंगल आदि ग्रहों के कुपित होने से व्यक्ति पर विपत्तियाँ आती हैं क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर : नहीं, शनि-मंगल आदि ग्रह कोई चेतन देवता नहीं हैं जो किसी पर कुपित या किसी पर प्रसन्न होते हों। अत: शनि आदि ग्रह की शांति के लिए विविध कर्मकाण्डों का अनुष्ठान करना शास्त्र विरुद्ध है ।

प्र. ३७०. क्या राशि फल देखकर भविष्य की बातों का ज्ञान होता है ?

उत्तर : जी नहीं, राशि फल देखकर भविष्यवाणी करना कल्पना मात्र है या आनुमानिक हो सकता है, किसी वैदिक शास्त्र में राशि देखकर भविष्यवाणी करने या भविष्य की बातों को जानने की चर्चा नहीं आयी है ।

प्र. ३७१. क्या चारों धाम आदि तीर्थयात्रा करने से पाप छूटते हैं ?

उत्तर : जी नहीं, चारों धाम आदि तीर्थ यात्रा करने से पाप नहीं

छूटते हैं यह मान्यता असत्य है, शास्त्र विपरीत है । इससे मात्र भौगोलिक, प्राकृतिक ज्ञान-विज्ञान की वृद्धि होती है।

प्र. ३७२. क्या मंदिर आदि स्थानों में पूजा-पाठ के बाद बाँटे जाने वाले प्रसाद को ग्रहण करना अनिवार्य होता है तथा ये प्रसाद ग्रहण न करें तो ईश्वर नाराज होते हैं ये बात उचित है ?

उत्तर : नहीं, पूजा पाठ के बाँटे जाने वाले प्रसाद को ग्रहण करना अनिवार्य नहीं है तथा ऐसा प्रसाद ग्रहण न करें तो ईश्वर नाराज होते हैं यह बात गलत है ।

प्र. ३७३. मंदिरों में आरती करने = अगरबत्ती या दीपक से ईश्वर प्रसन्न होते हैं क्या यह बात सही है ?

उत्तर : नहीं, अगरबत्ती जलाने या दीपक जलाने मात्र से ईश्वर प्रसन्न नहीं होते हैं अपितु ईश्वर की आज्ञा का पालन करने से तथा ईश्वराज्ञा के विपरीत आचरण न करने से ईश्वर प्रसन्न होते हैं ।

प्र. ३७४. ब्राह्मणों के द्वारा पूजा पाठ करवाने से भटकती आत्माओं को शांति मिलती है, क्या यह बात सही है ?

उत्तर : नहीं, यह बात सर्वथा गलत है, क्योंकि सर्व प्रथम यह जानना चाहिये कि कोई भी आत्मा कभी भी मृत्यु के बाद भटकती नहीं है। वह तो मृत्यु के पश्चात् तत्काल ईश्वर की व्यवस्था से दूसरा शरीर प्राप्त कर लेती है ।

प्र. ३७५. दीपावलि, जन्माष्टमी आदि पर्वों के दिन जुआ खेलना चाहिए। क्या यह बात शास्त्र सम्मत है ?

उत्तर : नहीं, दीपावलि के दिन जुआ खेलने का विधान किसी भी वैदिक शास्त्र में नहीं है अपितु वेदादि शास्त्रों में जुआ खेलने का निषेध किया गया है ।

प्र. ३७६. जिस घर में मृत्यु होती है, वहाँ १२ दिन तक संध्या हवन भजन, उपासना नहीं करना चाहिए, क्या यह बात उचित है ?

उत्तर : नहीं, यह बात उचित नहीं है अपितु मृत्यु के पश्चात् तो घर में यज्ञ करके घर को शुद्ध, कीटाणु रहित बनाना चाहिये तथा ईश्वर की उपासना, भजन आदि के द्वारा घर में आयी विपत्ति को सहन करने हेतु ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिये।

प्र. ३७७. दीपावली के दिन लक्ष्मी की मूर्ति की पूजा करनी चाहिये। यदि ऐसा न करें तो घर में लक्ष्मी का निवास नहीं होता है। क्या ये बात सत्य है ?

उत्तर : नहीं, यह बात सत्य नहीं है क्योंकि लक्ष्मी की मूर्ति की पूजा करने मात्र से व्यक्ति लक्ष्मी (धन-सम्पत्ति) से सम्पन्न हो जाता तो संसार में कोई दरिद्र रहता ही नहीं । लक्ष्मी धन सम्पत्ति आदि ऐश्वर्य की प्राप्ति तो मेहनत व इमानदारी से प्राप्त होती है ।

प्र. ३७८. शिवलिंग के ऊपर पानी चढ़ाने पर महादेव/शिवजी प्रसन्न होते हैं क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर : नहीं, शिवलिंग पर पानी चढ़ाना सर्वथा अनुचित, अनैतिक एवं अवैदिक है । ईश्वर का अपमान है । इस प्रकार के कर्म से ईश्वर कदापि प्रसन्न नहीं होते हैं अपितु पानी चढ़ाने वाले को ईश्वर की और से दंड मिलता है ।

प्र. ३७९. जिन संत महात्माओं के नाम के पहले 'श्री श्री १०८

श्री' लगा होता है क्या वे ईश्वर के निकट होते हैं ?

उत्तर : नहीं, अपने नाम के पहले 'श्री, श्री १०८ श्री' लिखने मात्र से कोई ईश्वर के निकट नहीं होता है अपितु जो जितना अधिक ईश्वर के गुणों को धारण करता है वह उतना ही अधिक ईश्वर के निकट होता है ।

प्र. ३८०. कभी भी कहीं भी भय लगे तो किसी देवी-देवता का पाठ करना चाहिये क्या ये बात ठीक है ?

उत्तर : नहीं, यह बात शास्त्र सम्मत नहीं है ।

प्र. ३८१. विधाता ने जिसका रहना-बसना, खाना-पीना जहाँ लिखा होता है वह वहीं रहता, बसता, खाता-पीता है क्या यह सिद्धांत उचित है ?

उत्तर : नहीं, यह सिद्धांत अनुचित है क्योंकि व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कहीं भी रहने या खाने-पीने में स्वतंत्र है ।

प्र. ३८२. क्या घर में 'मनी प्लांट' नामक पौधा लगाने से घर में संपत्ति बढ़ती है ?

उत्तर : नहीं, घर में 'मनी प्लांट' लगाने मात्र से संपत्ति नहीं बढ़ती है । इसके लिए कठोर श्रम व पुरुषार्थ करना पड़ता है ।

प्र. ३८३. क्या गंगा आदि पवित्र नदियों में सिक्के (पैसे) डालने से मनोकामना पूरी होती है ?

उत्तर : नहीं, नदियों में सिक्के डालने से मनोकामनाएँ पूरी नहीं होती हैं ।

प्र. ३८४. क्या जादू टोना करने या डोरा ताबीज बाँधने से संकट टल जाते हैं ?

उत्तर : नहीं, जादू टोना करने या डोरा ताबीज बाँधने से संकट नहीं

टलते हैं ।

प्र. ३८५. 'गुरु' बनाना चाहिये कि नहीं, क्या गुरुबनाना अनुचित है ?

उत्तर : आध्यात्मिक उन्नति प्रगति के लिए गुरु अवश्य बनाना चाहिये। किन्तु पूर्णतया परीक्षा करके आदर्श, जितेन्द्रिय, सत्यवादी, परोपकारी, सच्चे ईश्वर को जानने व जनाने वाले योगी महात्मा को ही गुरु बनाना चाहिए। हाँ, बिना परीक्षा किये झूठे, छली, कपट, पाखंडी व्यक्ति को गुरु बनाना अनुचित है ।

प्र. ३८६. देवी - देवता के सामने पशु बलि देने (मारने) से मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं, या नहीं ?

उत्तर : जी नहीं, पशुबलि देना (पशुओं को मारना) सर्वथा अधार्मिक कार्य है। ईश्वर सब जीवों की माता है, कोई भी माता कभी भी अपने बालक की हानि, पीड़ा, दु:ख पहुँचाना तथा हत्या करना नहीं और न करवाना चाहती ।

प्र. ३८७. क्या पूर्णिमा के दिन दान-दक्षिणा देना, यज्ञ करना शुभ होता है ?

उत्तर : दान-दक्षिणा देना और यज्ञ आदि धार्मिक कार्य करना सभी दिनों में शुभ ही होता है, अशुभ कभी नहीं होता है। इसलिए पूर्णिमा के दिन भी दान-दक्षिणा देने, यज्ञ करने में कोई आपत्ति नहीं हैं ।

प्र. ३८८. क्या काँच का टूटना शुभ नहीं है और टूटे हुऐ काँच को घर में रखना अशुभ है ?

उत्तर : काँच का टूटना कोई शुभ कार्य नहीं है तथा टूटा हुआ काँच घर में हो तो वह हानिकारक है इसीलिए टूटा हुआ काँच घर में रखने को अशुभ कहा जाता है ।

प्र. ३८९. रात्रि में झाड़ू लगाना और कचरा बाहर निकालना ठीक नहीं है । क्या यह मान्यता सही है ?

उत्तर : ऐसा कोई शास्त्रोक्त नियम नहीं है कि रात्रि में झाड़ू न लगाएँ किंतु इसमें रहस्य की बात यह है कि रात्रि में प्रकाश कम होने से घर में छोटी या बारीक कोई बहुमूल्य वस्तु गिरी हो तो दिखाई नहीं पड़ती है। तथा कचरा बाहर फेंकने से वह बहुमूल्य वस्तु भी बाहर चली जाती है। इसलिए यह बात कही जाती है कि रात्रि में न तो झाड़ू लगायें, न ही कचरा बाहर फेकें ।

प्र. ३९०. 'अनेकता में एकता' क्या यह मान्यता ठीक है ?

उत्तर : जी नहीं, अनेकता में एकता का नारा सर्वथा गलत है । एकता के लिए धर्म, भाषा, संविधान, पूजापद्धति आदि में एकरुपता होना अनिवार्य है ।

प्र. ३९१. क्या धर्म एक ही है या अनेक धर्म हैं ?

उत्तर : धर्म एक ही है, अनेक धर्म नहीं होते हैं अर्थात् मत, पंथ सम्प्रदाय तो अनेक प्रकार के प्रचलित हैं किंतु वास्तव में धर्म तो एक ही होता है ।

प्र. ३९२. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष रक्तविहीन क्रांति है अर्थात् लहु बहाये बिना हमें केवल शांत अहिंसक उपायों से स्वतंत्रता प्राप्त हुई है, क्या यह मान्यता ठीक है ?

उत्तर : जी नहीं, यह मान्यता ठीक नहीं है क्योंकि देश को विदेशी आक्रान्ताओं से स्वतंत्र कराने के लिए राणा प्रताप, राणा सांगा शिवाजी, मंगल पाण्डे, महारानी लक्ष्मीबाई, वीर भगतसिंह, तात्याटोपे आदि लाखों देशभक्तों ने अपनी वीरता से पठान,

मुगलों एवं अंग्रेजों के दांत खट्टे किये हैं तथा अपना बलिदान दिया है अतः केवल अहिंसक उपायों से ही देश स्वतंत्र हुआ है ऐसा मानना उचित नहीं है ।

योग

प्र. ३९३. मनुष्य जीवन का मुख्य लक्ष्य क्या है ?

उत्तर : समस्त दुःखों से छूटना व पूर्ण आनन्द की प्राप्ति करना।

प्र. ३९४. मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति कैसे होगी ?

उत्तर : योग का अनुष्ठान करने से मनुष्य जीवन के मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति होती है ।

प्र. ३९५. योग किसे कहते है ?

उत्तर : मन में सांसारिक विचारों को तथा अनावश्यक विचारों को रोक कर मन, बुद्धि, आदि प्रकृति से बने पदार्थों का या आत्मा का या ईश्वर का अनुभव करना योग कहलाता है।

प्र. ३९६. योगाभ्यास में सफलता के लिए क्या करना होता है ?

उत्तर : योगाभ्यास में सफलता के लिए योग के अङ्गों का श्रद्धापूर्वक नियमित पालन करना होता है ।

प्र. ३९७. योग के कितने अङ्ग हैं और कौन कौन से ?

उत्तर : योग के आठ अङ्ग है - यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि ।

प्र. ३९८. यम किसे कहते हैं ?

उत्तर : अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य व अपरिग्रह नामक **पाँच** कर्त्तव्यों का पालन करना यम कहलाता है ।

प्र. ३९९. नियम किसे कहते हैं ?

उत्तर : शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान नामक

पाँच कर्त्तव्यों का पालन करना नियम कहलाता है ।

प्र. ४००. अहिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर : शरीर, वाणी तथा मन से सब काल में समस्त प्राणियों के साथ वैरभाव (द्वेष) छोड़कर प्रेमपूर्वक व्यवहार करना 'अहिंसा' कहलाती है ।

प्र. ४०१. अहिंसा के पालन करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : अहिंसा धर्म का पालन करने वाले व्यक्ति के मन से समस्त प्राणियों के प्रति वैर भाव (द्वेष) छूट जाता है, तथा उस अहिंसक के सत्सङ्ग एवं उपदेशानुसार आचरण करने से अन्य व्यक्तियों का भी अपनी-अपनी योग्यतानुसार वैर-भाव छूट जाता है।

प्र. ४०२. सत्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : जैसा देखा हुआ, सुना हुआ, पढ़ा हुआ, अनुमान किया हुआ ज्ञान मन में है, वैसा ही वाणी सब के हित के लिए बोलना और शरीर से आचरण में लाना 'सत्य' कहलाता है ।

प्र. ४०३. सत्य के पालन से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : सत्य का पालन करने वाला जिन-जिन उत्तम कार्यों को करना चाहता है, वे सब सफल होते हैं ।

प्र. ४०४. क्या जिस बात को समाज का बहुमत प्राप्त हो उसे सत्य माननी चाहिए ?

उत्तर : सत्य का आधार प्रमाण, बुद्धिमत्ता, वेद व जिस में सबकी उन्नति हो व सुख बढ़े । समाज में झूठ बोलने वालों का बहुमत है, मांस खाने वालों का बहुमत है फिर भी झूठ बोलना,

मांस खाना सत्य नहीं माना जाएगा क्योंकि यह वेद विरुद्ध है ।

प्र. ४०५. क्या किसी के प्राण बचाने जैसे कार्य के लिए झूठ बोलना उचित है ?

उत्तर : किसी के प्राण बचाने जैसे कार्य के लिए झूठ बोलना अनुचित है । हमेशा सत्य के आश्रय से ही किसी का प्राण बचाना चाहिए ।

प्र. ४०६. अस्तेय किसे कहते हैं ?

उत्तर : मन, वाणी, शरीर से चोरी न करना तथा उत्तम कार्यों में तन, मन, धन से सहायता करना अस्तेय कहलाता है ।

प्र. ४०७. अस्तेय के पालन से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : मन, वाणी तथा शरीर से चोरी छोड़ देने वाला व्यक्ति अन्य व्यक्तियों का विश्वासपात्र और श्रद्धेय बन जाता है । ऐसे व्यक्ति को आध्यात्मिक एवं भौतिक उत्तम गुणों व उत्तम पदार्थों की प्राप्ति होती है ।

प्र. ४०८. ब्रह्मचर्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : मन तथा इन्द्रियों पर संयम करके वीर्य आदि शारीरिक शक्तियों की रक्षा करना, वेदादि सत्य शास्त्रों को पढ़ना तथा ईश्वरकी उपासना करना 'ब्रह्मचर्य' कहलाता है ।

प्र. ४०९. ब्रह्मचर्य के पालन से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : ब्रह्मचर्य के पालन से शारीरिक तथा बौद्धिक बल की प्राप्ति होती है ।

प्र. ४१०. अपरिग्रह किसे कहते हैं ?

उत्तर : हानिकारक व अनावश्यक वस्तुओं तथा हानिकारक व अनावश्यक विचारों का संग्रह न करना अपरिग्रह कहलाता है ।

प्र. ४११. अपरिग्रह के पालन से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : इसका पालन करने वाले व्यक्ति में आत्मा के स्वरूप को जानने की इच्छा उत्पन्न होती है अर्थात् मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, कहाँ जाऊँगा, मुझे क्या करना चाहिए मेरा क्या सामर्थ्य है इत्यादि प्रश्न उसके मन में उत्पन्न होते हैं।

प्र. ४१२. शौच किसे कहते हैं ?

उत्तर : बाह्य व आन्तरिक शुद्धि रखना शौच कहलाता है । शरीर, वस्त्र, पात्र, स्थान, खानपान तथा धनोपार्जन (कमाई) को पवित्र रखना बाह्य शुद्धि है । तथा विद्या, सत्संग, स्वाध्याय, सत्यभाषण व धर्माचरण से मन-बुद्धि आदि अन्त:करण को पवित्र करना आन्तरिक शुद्धि है ।

प्र. ४१३. शौच के पालन से क्या लाभ है ?

उत्तर : शौच के पालन से शरीर के प्रति आसक्ति नहीं रहती । बुद्धि बढ़ती है, मन एकाग्र तथा प्रसन्न रहता है, इन्द्रियों पर नियंत्रण होता है तथा आत्मा-परमात्मा को जानने का सामर्थ्य प्राप्त होता है ।

प्र. ४१४. संतोष किसे कहते हैं ?

उत्तर : अपने पास विद्यमान ज्ञान, बल तथा साधनों से पूर्ण पुरुषार्थ करने के पश्चात् जितना भी आनन्द, विद्या, बल, धन आदि फल के रूप में प्राप्त हो, उतने से ही संतुष्ट रहना, उससे अधिक की इच्छा न करना संतोष कहलाता है ।

प्र. ४१५. संतोष के पालन से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : संतोष के पालन करने पर व्यक्ति मानसिक शांतिरूपी विशेष सुख की अनुभूति होती है ।

प्र. ४१६. तप किसे कहते हैं ?

उत्तर : धर्माचरणरूप उत्तम, कर्त्तव्य कर्मों को करते हुए भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी हानि-लाभ, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों को प्रसन्नतापूर्वक सहन करना तप कहलाता है ।

प्र. ४१७. तप से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : तप का अनुष्ठान करने से शरीर, स्वस्थ, बलवान, स्फूर्तिमान बनता है तथा इन्द्रियों का सामर्थ्य-बढ़ जाता है ।

प्र. ४१८. स्वाध्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर : मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले वेद आदि सत्य शास्त्रों को पढ़ना, ईश्वर के स्वरूप को प्रकाशित करने वाले मन्त्रों एव 'ओ३म्' आदि का अर्थ सहित जप करना स्वाध्याय है ।

प्र. ४१९. स्वाध्याय से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : स्वाध्याय से ईश्वर, वैदिक-विद्वान्, योगी आदि धार्मिक महापुरुषों के साथ सम्बन्ध हो जाता है तथा उनसे विविध उत्तम कार्यों में सहायता प्राप्त होती है ।

प्र. ४२०. ईश्वर-प्रणिधान किसे कहते हैं ?

उत्तर : शरीर, बुद्धि, बल, विद्या, धनादि समस्त साधनों को ईश्वर प्रदत्त मानकर उनका प्रयोग मन, वाणी तथा शरीर से ईश्वर की प्राप्ति के लिए ही करना, लौकिक उद्देश्य - धन, मान, यश आदि की प्राप्ति के लिए न करना 'ईश्वर प्रणिधान' कहलाता है । ईश्वर मुझे देख, सुन, जान रहा है, यह भावना भी मन में बनाये रखना, 'ईश्वर प्रणिधान' है ।

प्र. ४२१. ईश्वर-प्रणिधान से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : ईश्वर प्रणिधान के अनुष्ठान से समाधि शीघ्र लग जाती है।

प्र. ४२२. आसन किसे कहते हैं ?

उत्तर : ईश्वर के ध्यान के लिए जिस स्थिति में सुखपूर्वक, स्थिर होकर, बैठा जाय, उस स्थिति का नाम 'आसन' है। जैसे- पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन आदि ।

प्र. ४२३. आसन से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : आसन का अच्छा अभ्यास हो जाने पर योगाभ्यासी को उपासना काल में तथा व्यवहार काल में सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास आदि द्वन्द्व कम सताते हैं तथा योगाभ्यास की आगे की क्रियाओं को करने में सरलता होती है ।

प्र. ४२४. क्या चक्रासन, धनुरासन, शीर्षासन, पश्चिमोत्तानासन आदि योग के आसन हैं ? यदि नहीं तो क्यों ?

उत्तर : नहीं, आसन के दो विभाग कर सकते हैं पहला वे आसन जो शरीर को स्वस्थ, बलवान बनाने के लिए व्यायाम के रूप में प्रयोग करते हैं। दूसरा वे जो प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि की सिद्धि के लिए प्रयोग करते हैं। चक्रासन, धनुरासन आदि व्यायाम के आसन हैं न कि योग के आसन। अत: धनुरासन आदि को योगासन नहीं कहना चाहिए।

प्र. ४२५. प्राणायाम किसे कहते हैं ?

उत्तर : किसी आसन पर स्थिरतापूर्वक बैठने के पश्चात् मन की चंचलता को रोकने के लिए, श्वास-प्रश्वास की गति को

रोकने स्वरूप जो क्रिया की जाती है, उस क्रिया का नाम प्राणायाम है ।

प्र. ४२६. प्राणायाम कितने प्रकार के हैं ? उनके नाम बताईये ।

उत्तर : महर्षि पतञ्जलि जी ने योगदर्शन में ४ प्रकार के प्राणायाम बताये हैं (१) बाह्य प्राणायाम (२) आभ्यंतर प्राणायाम (३) स्तम्भवृत्ति प्राणायाम (४) बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम।

प्र. ४२७. प्राणायाम करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : प्राणायाम करने वाले व्यक्ति का अज्ञान निरन्तर नष्ट होता जाता है तथा ज्ञान की वृद्धि होती है। स्मृतिशक्ति तथा मन की एकाग्रता में वृद्धि होती है। वह रोग रहित होकर उत्तम स्वास्थ्य को प्राप्त होता है ।

प्र. ४२८. प्रत्याहार किसे कहते हैं ?

उत्तर : मन के रुक जाने पर नेत्रादि इन्द्रियों का अपने-अपने रूपादि विषयों के साथ सम्बन्ध नहीं रहता अर्थात् इन्द्रियाँ शान्त होकर अपना कार्य बन्द कर देती हैं, इस स्थिति का नाम 'प्रत्याहार' है ।

प्र. ४२९. प्रत्याहार से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : प्रत्याहार की सिद्धि होने से योगाभ्यासी का इन्द्रियों पर अच्छा नियंत्रण हो जाता है अर्थात् वह अपने मन को जहाँ और जिस विषय में लगाना चाहता है, लगा लेता है तथा जिस विषय से मन को हटाना चाहता है, हटा लेता है ।

प्र. ४३०. धारणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : ईश्वर का ध्यान करने के लिए आंख बन्द करके मन को मस्तक, भ्रूमध्य, नासिका, कण्ठ, हृदय, नाभि आदि किसी एक स्थान पर स्थिर करने या रोकने का नाम 'धारणा' है।

प्र. ४३१. धारणा का क्या लाभ है ?

उत्तर : मन को एक ही स्थान पर स्थिर करने के अभ्यास से ईश्वर विषयक गुण-कर्म-स्वभावों का चिन्तन करने में (ध्यान में) दृढ़ता आती है, अर्थात् ईश्वर विषयक ध्यान शीघ्र नहीं टूटता। यदि टूट भी जाय तो दोबारा सरलता पूर्वक किया जा सकता है।

ध्यान विषयक प्रश्न पृष्ठ ९९में हैं उन्हें यहाँ पढ़ना चाहिए।

प्र. ४३२. समाधि किसे कहते हैं ?

उत्तर : ध्यान करते हुए जब ईश्वर का प्रत्यक्ष होता है अर्थात् ईश्वर के आनन्द में साधक निमग्न हो जाता है तब उस अवस्था को समाधि कहते हैं ।

प्र. ४३३. समाधि का फल क्या है ?

उत्तर : समाधि का फल है, ईश्वर का साक्षात्कार होना । समाधि अवस्था में साधक समस्त भय, चिन्ता, बन्धन आदि दु:खों से छूटकर ईश्वर के आनन्द की अनुभूति करता है तथा ईश्वर से समाधि काल में ज्ञान, बल, उत्साह, निर्भयता, स्वतन्त्रता आदि की प्राप्ति करता है । इसी प्रकार बारम्बार समाधि लगाकर अपने मन में विद्यमान राग-द्वेष आदि अविद्या के कुसंस्कारों को दग्धबीजभाव अवस्था में

पहुंचाकर (नष्ट करके) मुक्ति पद (मोक्ष) को प्राप्त कर लेता है ।

प्र. ४३४. योगाभ्यास करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : (१) मेधा बुद्धि की प्राप्ति होती है । (२) तीव्र स्मृति की प्राप्ति होती है । (३) एकाग्रता की प्राप्ति होती है । (४) मन आदि इन्द्रियों पर नियन्त्रण रहता है। (५) काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि कुसंस्कारों का नाश व सुसंस्कारों का उदय होता है। (६) शान्ति, प्रसन्नता, सन्तुष्टि, निर्भीकता की प्राप्ति होती है। (७) मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

प्र. ४३५. योगाभ्यास न करने से क्या-क्या हानि होती है ?

उत्तर : (१) अपने व्यवहार से अन्यों को दु:खी करता है । (२) मन, इन्द्रियों का दास होता है । (३) वेद व ऋषियों की सूक्ष्म बातों (विषयों) को समझने में असमर्थ होता है। (४) रोग, वियोग, अपमान, अन्याय, हानि, विश्वासघात, मृत्यु आदि से होने वाले दु:खों को सहन नहीं कर सकता। (५) काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि से सम्बन्धित कुसंस्कारों को नष्ट नहीं कर पाता और सुसंस्कारों की वृद्धि नहीं कर पाता। (६) समस्याओं का ठीक समाधान नहीं कर सकता ।

प्र. ४३६. योग विद्या का मुख्य ग्रंथ कौन सा है ?

उत्तर : योग विद्या का मुख्य ग्रंथ महर्षि पतंजलि द्वारा रचित 'योगदर्शन' है ।

प्र. ४३७. दु:ख का मूल कारण क्या है ?

उत्तर : दु:ख का मूल कारण जीवात्मा का शरीर के साथ संयोग है।

प्र. ४३८. उपरोक्त संयोग का कारण क्या है ?

उत्तर : उपरोक्त संयोग का कारण अविद्या है ।

प्र. ४३९. योगाभ्यासी व्यक्ति अन्यों से किस प्रकार का व्यवहार करे कि उसका मन प्रसन्न रहे ?

उत्तर : सुखसाधन सम्पन्न व्यक्तियों के साथ मित्रता का, दु:खी व्यक्तियों के साथ दया का, पुण्यात्माओं अर्थात् धार्मिक, विद्वान्, परोपकारी व्यक्तियों के साथ प्रसन्नता का व पापियों के साथ उपेक्षा (न राग, न द्वेष) का व्यवहार करना चाहिए।

प्र. ४४०. योग के अंतर्गत कौन-कौन सी समाधि आती है ?

उत्तर : दो प्रकार की समाधि (१) सम्प्रज्ञात समाधि और (२) असम्प्रज्ञात समाधि ।

प्र. ४४१. सम्प्रज्ञात समाधि किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिस समाधि में (१) स्थूल भूत अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश (२) सूक्ष्मभूत अर्थात् रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श नामक तन्मात्रा (३) मन, इन्द्रियाँ, अहंकार व महत्तत्त्व (४) जीवात्मा व इनके स्वरूप का साक्षात्कार होता है उसे सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं ।

प्र. ४४२. असम्प्रज्ञात समाधि किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिस समाधि में ईश्वर का साक्षात्कार होता है उसे असम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं ।

प्र. ४४३. क्या योगी घी, मक्खन, बादाम, हलुआ, खीर, रसमलाई आदि का सेवन कर सकता है ?

उत्तर : हाँ, योगी इन पदार्थों का सेवन जीवन रक्षा के लिए करता है। शरीर को बलवान्, पुष्ट बनाने के लिए व ईश्वर प्राप्ति

के लिए करता है । इन पदार्थों में आसक्त नहीं होता है।

प्र. ४४४. क्या पूर्ण योगी परमात्मा के तुल्य हो जाता है ?

उत्तर : नहीं, क्योंकि जीवात्मा स्वभाव से ही एकदेशी, अल्पज्ञ, अल्पशक्तिमान् आदि गुणों वाला है। योगी बनने के बाद भी ये गुण उसमें रहते हैं क्योंकि स्वाभाविक गुण कभी छूटते नहीं हैं ।

प्र. ४४५. क्या तर्क करना योग में बाधक है ?

उत्तर : नहीं तर्क करना योग में बाधक नहीं अपितु साधक है । किन्तु कुतर्क करना बाधक है ।

प्र. ४४६. क्या स्त्रियाँ योगिनी बन सकती हैं ?

उत्तर : हाँ, योगी बनने का सामर्थ्य स्त्री और पुरुष दोनों में है ।

प्र. ४४७. क्या पूर्ण अहिंसक योगी के प्रति सभी प्राणी वैरभाव छोड़ देते हैं ?

उत्तर : नहीं, उस योगी के उपदेश व आचरण को समझने वाले प्राणी अपनी योग्यता अनुसार वैरभाव को छोड़ते हैं ।

प्र. ४४८. क्या सच्चा योगी किसी अज्ञानी-अधर्मी के सिर पर हाथ रख कर या किसी शक्ति से उसकी समाधि लगवा सकता है ?

उत्तर : नहीं, समाधि के लिए योग के आठ अङ्गों का पालन करना पड़ता है। अपने मन को राग-द्वेष से रहित बनाना पड़ता है।

प्र. ४४९. क्या ईश्वर, जीव और प्रकृति इन तीन पदार्थों को अलग अलग अनादि तत्त्व माने बिना कोई योगी बन सकता

है ?

उत्तर : नहीं, वेद परमपिता परमात्मा के द्वारा मनुष्यों को दिया हुआ ज्ञान है। वेदादि सत्य शास्त्रों में सर्वत्र यह वर्णन मिलता है कि इस संसार में तीन पदार्थ अनादि हैं, नित्य हैं, पृथक्-पृथक् हैं। अत: इसके विरुद्ध मानने वाला व्यक्ति कदापि योगी नहीं बन सकता।

प्र. ४५०. क्या योगी फल, फूल, मिठाई, सोना चाँदी, घड़ी, पेन आदि इच्छित वस्तुएँ बिना उपादान कारण के तत्काल बना सकता है ?

उत्तर : नहीं। योगी बिना उपादान कारण के इस प्रकार के वस्तुओं को नहीं बना सकता है।

प्र. ४५१. क्या योगी दूसरे के शरीर में प्रवेश कर सकता है तथा अपने शरीर में वापस लौटकर पुन: जीवित हो सकता है ?

उत्तर : नहीं। दूसरे के शरीर में प्रविष्ट होकर पुन: लौटना असंभव है।

प्र. ४५२. क्या योगी भूत, भविष्यत् की सभी बातों को जान सकता है?

उत्तर : नहीं, योगी भूत, भविष्यत् की सभी बातों को नहीं जान सकता है।

प्र. ४५३. क्या योग के नाम से प्रचलित सभी सिद्धियाँ सत्य हैं ? और उन सभी को प्राप्त करना मोक्ष के लिए आवश्यक है ?

उत्तर : योग के नाम पर प्रचलित सभी सिद्धियाँ सत्य नहीं हैं अपितु बहुत सी असंभव हैं, क्योंकि ऐसी सिद्धियों की प्राप्ति में प्रत्यक्षादि प्रमाण उपलब्ध नहीं होते। साथ ही तर्क से ये खंडित हो जाती हैं। जैसे कि जीव का परमात्मा के समान सर्वज्ञ होना, बिना खाये-पिये वर्षों तक जीवित रहना, नये शरीरों को बना लेना, हाथ-पाँव आदि काटने पर भी दु:ख का न होना इत्यादि।

प्र. ४५४. आजकल लोग आसन-व्यायाम को प्राय: योग कहते हैं, जैसे - धनुरासन, शीर्षासन आदि करने को या भ्रामरी, भस्त्रिका आदि प्राणायाम करने को योग कहते हैं, क्या यह उचित है यदि नहीं तो क्यों ?

उत्तर : धनुरासन, शीर्षासन आदि आसनों को या भ्रामरी, भस्त्रिका आदि प्राणायाम को योग कहना उचित नहीं हैं क्योंकि — महर्षि पतञ्जलिजी ने योगदर्शन में धनुरासन, शीर्षासन आदि को योग के आसन कहीं नहीं कहा है। तथा भ्रामरी, भस्त्रिका प्राणायाम का भी कहीं उल्लेख नहीं किया है।

प्र. ४५५. यदि धनुरासन, शीर्षासन आदि को योग कहते रहें तो हानि क्या है ?

उत्तर : भयंकर हानियाँ हैं - जैसे इस प्रकार के प्रचार से — सच्ची योग विद्या लुप्त हो सकती है। लोग इसे ही योग समझने लगेंगे। जैसे कि २-३ हजार वर्ष से मूर्ति पूजा प्रारम्भ होने से ईश्वर को साकार ही समझने लगे हैं जबकि ईश्वर निराकार है।

ध्यान

प्र. ४५६. ध्यान किसे कहते हैं ?

उत्तर : ईश्वर के गुण–कर्म–स्वभाव का निरन्तर चिंतन करना किन्तु बीच में किसी अन्य वस्तु या विषय का स्मरण न करना ध्यान कहलाता है ।

प्र. ४५७. गायत्री मन्त्र के जप द्वारा ध्यान करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर : बुद्धि की मलिनता दूर होती है तथा धर्माचरण में श्रद्धा और योग्यता उत्पन्न होती है ।

प्र. ४५८. ध्यान का फल क्या है ?

उत्तर : ध्यान का निरंतर अभ्यास करते रहने से समाधि की प्राप्ति होती है तथा उपासक, व्यवहार सम्बन्धी समस्त कार्यों को दृढतापूर्वक, सरलता से सम्पन्न कर लेता है ।

प्र. ४५९. वैदिक रीति को छोड़ ध्यान की जो सैंकड़ो कल्पनायें की जाती हैं; क्या उनसे ईश्वर प्राप्ति हो सकती है ?

उत्तर : नहीं । ईश्वर की आज्ञानुसार विशुद्ध वैदिक ज्ञान और उसके अनुसार निष्काम कर्म व ईश्वर उपासना करने से ही ईश्वर प्राप्ति हो सकती है ।

प्र. ४६०. ध्यान किसका नहीं होता ?

उत्तर : (१) जिस वस्तु के स्वरूप का ज्ञान न हो उसका ध्यान नहीं होता । (२) जो प्रत्यक्ष ही मूर्तिमान हो उसका ध्यान नहीं होता कारण कि वह तो ज्ञात–प्राप्त है ही । (३) विपरीत लक्षण से अर्थात् मिथ्या ज्ञान से भी वस्तु का ध्यान नहीं

होता ।

प्र. ४६१. ईश्वर निराकार है यदि कोई उसे साकार मानकर, उसके हाथ, पांव, आंख, कान, मुख उसका ध्यान करे तो क्या इससे ईश्वर साक्षात्कार होगा ?

उत्तर : ऐसा मानकर ध्यान करे तो ईश्वर साक्षात्कार नहीं होगा क्योंकि ईश्वर ऐसे स्वरूप वाला नहीं है ।

प्र. ४६२. ध्यान करने के लिए मन/चित्त की स्थिति कैसी होनी चाहिए ?

उत्तर : ध्यान करने के लिए मन प्रसन्न होना चाहिये तथा खिन्नता, क्षोभ, राग–द्वेष आदि से रहित होना चाहिये ।

प्र. ४६३. ध्यान कैसे स्थान पर करना चाहिए ?

उत्तर : शान्त–एकान्त स्थान पर, स्वच्छ स्थान पर ध्यान करना चाहिये ।

प्र. ४६४. ध्यान करने से पूर्व क्या–क्या करना होता है ? / पूर्व सज्जा क्या की जाती है ?

उत्तर : किसी शान्त, स्वच्छ स्थान पर आंखें बंदकर सुखपूर्वक, स्थिर होकर जिस आसन में बैठ सकें उस आसन पर बैठना चाहिए। इसके बाद मन की चंचलता को रोकने के लिए प्राणायाम करना चाहिए, रूप आदि विषयों से सम्बन्ध हटाकर मन को मस्तक, हृदय, कण्ठ आदि किसी एस स्थान पर स्थिर करके वेदमंत्र या अन्य शब्दों के माध्यम से ध्यान प्रारंभ करना चाहिए ।

प्र. ४६५. ध्यान में सफलता कैसे मिलती है ?

उत्तर : निम्न उपायों का अनुष्ठान करने से ध्यान में सफलता

मिलती है – (१) ईश्वर सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान–विज्ञान को प्राप्त करने से। (२) सद्‌गुरु के मार्गदर्शन से । (३) व्यवहार में यम–नियम के पालन से । (४) शरीर सामान्य रूप से स्वस्थ होने से । (५) नित्य दोनों समय ध्यान के अभ्यास से । (६) संसार के प्रति वैराग्य होने से ।

प्र. ४६६. ईश्वर का ध्यान न करने से क्या हानियाँ होती हैं ?

उत्तर : (१) अपने दोषों, कुसंस्कारों को हटा नहीं पाते हैं। (२) शारीरिक, मानसिक रोगों से ग्रस्त रहते हैं। (३) जीवन का मुख्य लक्ष्य अर्थात् समस्त दु:खों से छूटना इसे प्राप्त नहीं कर पाते हैं । (४) दया, प्रेम, धैर्य, सहनशीलता, त्याग, उत्साह, निर्भीकता आदि दिव्य गुणों को प्राप्त नहीं कर पाते हैं । (५) धर्माचरण, आदर्शों का पालन नहीं कर पाते हैं। (६) सुख–शांति, एकाग्रता, मन पर नियंत्रण आदि प्राप्त नहीं कर पाते हैं ।

प्र. ४६७. ईश्वर का ध्यान दिन में किस समय करना चाहिए ?

उत्तर : ईश्वर का ध्यान दिन में प्रात: व सायं दो समय विधिवत् करना चाहिए। दोनों समय १–१ घंटा ध्यान करना अधिक लाभदायक है तथा दिनभर अन्य कार्यों को करते समय भी ईश्वर की स्मृति बनाए रखना चाहिए। ध्यान बिल्कुल न किया जाये इसकी अपेक्षा दोनों समय १०, २० या ३० मिनिट ध्यान करना भी लाभदायक है।

प्र. ४६८. मनुस्मृति में संध्या = ध्यान न करने वाले के लिए क्या लिखा है ?

उत्तर : जो मनुष्य नित्य प्रात: और सायं संध्योपासन (ध्यान) को नहीं करता उसको शूद्र (सेवा कार्य करने वाला) के समान समझकर शिष्टजनों से अलग करके निकृष्टजनों में रख देना चाहिए।

प्र. ४६९. क्या निराकार वस्तु का ध्यान हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, निराकार वस्तु का ध्यान हो सकता है ।

प्र. ४७०. जो लौकिक वस्तु नहीं दिखती है क्या उसका भी व्यवहार में ध्यान किया जाता है ?

उत्तर : हाँ । जैसे कि हवा, मोबाईल–टी.वी. आदि की तरंगें, इलेक्ट्रोन, प्रोटोन आदि नहीं दिखते पर इनके गुणों का चिंतन–मनन किया जा सकता है ।

प्र. ४७१. ध्यान करने से जो लाभ आत्मा व मन को होता है क्या वह किसी दवाई या भौतिक चीजों जैसे, धन, मीठाई सुंदर वस्त्र, आभूषण, आदि से प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर : नहीं, ध्यान करने से जो लाभ होता है वह भौतिक वस्तुओं से प्राप्त नहीं हो सकता ।

प्र. ४७२. ध्यान के विषय में कुछ विदेशी विद्वानों के विचार बताइए ?

उत्तर : हरबर्ट बेन्सन, एम. डी. द्वारा लिखित पुस्तक The Relaxation Response के अनुसार योग/'ध्यान' मानसिक और शारीरिक तनाव को कम कर रक्तचाप का नियन्त्रण करता है। *जान केब्ट–जिन,* पी.एच.डी. ने यह सिद्ध किया है कि चिंता और कष्ट भी 'ध्यान' द्वारा कम किए जा सकते हैं।

प्र. ४७३. क्या ध्यान में मन विचारों से रहित हो जाता है ?

उत्तर : नहीं, ध्यान में मन विचारों से सर्वथा रहित नहीं हो जाता ईश्वर विषयक विचार मन में रहते हैं ।

प्र. ४७४. साकार का ध्यान करना सरल होता है निराकार का

कठिन है परन्तु अत: ईश्वर को साकार मानकर ध्यान कर सकते हैं ?

उत्तर : नहीं, क्योंकि ईश्वर साकार नहीं है। जो वस्तु गुण, कर्म, स्वभाव से जैसी होती है उसका उसी रूप में ध्यान किया जाता है। जैसे कि पानी को दूध मानकर नहीं पिया जा सकता इसी प्रकार से निराकार ईश्वर का भी साकार रूप में ध्यान नहीं किया जा सकता और न ही उस साकार रूप का ध्यान हमें सच्ची सुख-शान्ति दे सकता, जो निराकार ईश्वर का ध्यान करने से मिलती है। पत्थर को मिठाई समझकर खाना अज्ञान है ऐसे ही निराकार ईश्वर को साकार समझकर ध्यान करना अज्ञान है।

प्र. ४७५. ध्यान करने से होने वाले कोई पाँच लाभ बताईये ?

उत्तर : ध्यान करने से — (१) ईश्वरीय गुण जैसे - ज्ञान, बल, उत्साह, आनन्द, दया, प्रेम, धैर्य, सहनशीलता, निर्भयता, ओज, तेज आदि की प्राप्ति होती है। (२) कुसंस्कार नष्ट होकर अच्छे संस्कार बनते हैं व उत्पन्न होते हैं। (३) मन-इन्द्रियों पर नियन्त्रण होता है। एकाग्रता, स्मृति, बुद्धि बढ़ती है। (४) ईश्वर का साक्षात्कार होता है। (५) लौकिक - सांसारिक कार्यों में सफलता मिलती है।

प्र. ४७६. निराकार ईश्वर का ध्यान कैसे हो सकता है ?

उत्तर : निराकार वस्तु का निराकार रूप में उसके अन्य गुणों के माध्यम से ध्यान किया जाता है। ईश्वर में रूप, रंग का गुण नहीं है, वह सर्वव्यापक है, चेतन है, सृष्टि कर्त्ता है, आनंद स्वरूप है, अनंतज्ञान व बल से युक्त है, निर्भीक है, न्यायकारी है आदि का चिंतन करना ईश्वर का ध्यान कहलाएगा।

प्र. ४७७. क्या ध्यान करने से रोग दूर होते हैं ?

उत्तर : हाँ। ध्यान करने से मानसिक रोग में लाभ होता है। रक्तचाप, हृदय-रोग आदि में लाभ होता है। एक सीमा तक शारीरिक पीडा भी दूर हो जाती हैं।

प्र. ४७८. क्या ध्यान न करने वाले को पाप लगता है ? ईश्वरकी ओर से कोई दंड मिलता है ?

उत्तर : हाँ, ध्यान न करने वाले को पाप लगता है तथा ईश्वर की ओर से दंड भी मिलता है।

प्र. ४७९. क्या ध्यान करने वाला अपने व दूसरे व्यक्तियों के भविष्य की बातों को जान सकता हैं ?

उत्तर : नहीं। ध्यान करने वाला अपने व दूसरे व्यक्तियों के भविष्य की बातों को पूर्ण रूप मे नहीं जान सकता है।

प्र. ४८०. ईश्वर को न मानने वाले व्यक्ति को भी क्या ध्यान करने से लाभ होता है ?

उत्तर : नहीं। ध्यान करने वाले को ईश्वर के प्रति निष्ठा, रुचि, विश्वास होना अत्यंत आवश्यक है।

प्र. ४८१. क्या धन, सम्पत्ति, वैभव, साधन, सुविधा से रहित या कम स्थिति वाला ही ध्यान कर सकता है ?

उत्तर : ऐसा नहीं है। ईश्वर में श्रद्धा, विश्वास रखने वाले सभी व्यक्ति ध्यान कर सकते हैं।

प्र. ४८२. क्या धरती पर आसन लगाकर बैठने से ही ध्यान होता है, कुर्सी पर बैठकर या बिस्तर पर लेटकर ध्यान नहीं किया जा सकता ?

उत्तर : धरती पर आसन लगाकर बैठने से अपेक्षाकृत ध्यान अधिक अच्छा होता है, किन्तु किसी कारणवश कुर्सी पर बैठकर या बिस्तर पर लेटकर भी ध्यान किया जा सकता है।

प्र. ४८३. क्या ध्यान घर से बाहर जंगल, पर्वत, नदी, खेत, मैदान

में ही हो सकता है, घर में नहीं ?

उत्तर : ऐसा नहीं है, घर में भी ध्यान कर सकते हैं। किन्तु शान्त-एकान्त, स्वच्छ स्थान में अधिक एकाग्रता होती है, ध्यान शीघ्र लगता है ।

प्र. ४८४. क्या ध्यान करने से कोई रोग भी हो सकता है ?

उत्तर : ध्यान करने से कोई रोग नहीं होता है ।

प्र. ४८५. ध्यान के समय मस्तक में क्या किसी बिन्दु, सूर्य, चन्द्र, दीपक की लौ आदि वस्तु को आधार बनाना चाहिए ?

उत्तर : नहीं, ये सब क्रियाएँ एकाग्रता के लिए प्रांरभिक काल में कुछ समय के लिए कर सकते हैं ।

प्र. ४८६. क्या चुपचाप बैठे रहना, किसी भी विचार को मन में नहीं आने देने का नाम ध्यान है ?

उत्तर : चुपचाप बैठे रहना, किसी भी विचार को मन में नहीं आने देने का नाम ध्यान नहीं है। ध्यान में ईश्वर विषयक विचार बने रहते हैं ।

प्र. ४८७. ध्यान तो वृद्ध व्यक्तियों को करना चाहिए, युवा अवस्था में इसकी क्या आवश्यकता है ?

उत्तर : ध्यान तो बाल्यकाल से ही करना चाहिए । युवा अवस्था में पर्याप्त बल, स्मृति आदि होने के कारण ध्यान का अधिक लाभ मिलता है । युवा अवस्था से ही ध्यान करने वाला समाधि की अवस्था अच्छी प्रकार प्राप्त कर सकता है । वृद्धावस्था में ध्यान करने वाला रोग, निर्बलता आदि के कारण अच्छी प्रकार ध्यान का संपादन नहीं कर पाता है । युवा अवस्था में ध्यान करने वाले की आयु बढ़ती है, स्वास्थ्य अच्छा रहता है, आध्यात्मिक कुसंस्कारो को मार

पाता है । सांसारिक उन्नति होती है, जीवन सुख-शांति से युक्त बनता है।

प्र. ४८८. आजकल अनेक प्रकार की ध्यान पद्धतियाँ प्रचलित हैं, क्या वे सारी पद्धतियाँ ठीक हैं ?

उत्तर : नहीं, केवल वेदानुकूल पद्धति ही ठीक है ।

विद्यार्थी

प्र. ४८९. विद्यार्थी और अध्यापक को पाठ आरम्भ करते समय कौन से मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए ? उसका अर्थ बताइए ।

उत्तर : **ओ३म् सहनाववतु सह नौ भुनक्तु । सह वीर्य्यं करवावहै । तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥**

ओ३म् सहनाववतु = हे ईश्वर हम (गुरु शिष्य) दोनों मिल कर एक दूसरे की रक्षा करें । **सह नौ भुनक्तु** = मिलकर सांसारिक वा पारलौकिक सुख भोगें । **सह वीर्यं करवावहै** = हम मिलकर बल, श्रद्धा, प्रेम, यश बढ़ायें । **तेजस्विनावधीतमस्तु** = जो ज्ञान–विज्ञान सुनते, लिखते, पढ़ते उसे सीमित न रखे सारे संसार में बढ़ायें । **मा विद्विषावहै** = हममें द्वेष कटुता न आये । **ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः** = हम त्रिविध ताप से मुक्त हों ।

प्र. ४९०. आदर्श विद्यार्थी के कुछ गुण बतलाइये ?

उत्तर : आदर्श विद्यार्थी के कुछ गुण इस प्रकार हैं — रात को जल्दी सोना और प्रातः जल्दी (सूर्योदय के पूर्व) उठना, नियमित आसन–व्यायाम, भ्रमण (कसरत) करना, गायत्री आदि मंत्रों के माध्यम से ईश्वर का ध्यान करना, माता–पिता, गुरुजनों आदि का सम्मान आज्ञापालन करना, कुसंगति से दूर रहते हुए स्वाध्याय, सत्संग, सेवा, श्रम (पुरुषार्थ) एवं सदाचार को जीवन का अंग बनाना ।

प्र. ४९१. शास्त्र में विद्यार्थी के कितने लक्षण बताए हैं स्पष्ट करो ?

उत्तर : शास्त्र में विद्यार्थी के पाँच लक्षण बतलाए हैं — (१) विद्यार्थी को कौए की तरह हर समय सजग सावधान रहना चाहिए । (२) विद्यार्थी को बगुले की तरह एकाग्र चित्त होना चाहिए । (३) विद्यार्थी को कुत्ते की तरह सतर्क होकर सोना चाहिए । (४) विद्यार्थी को शुद्ध, सात्त्विक, संयमित भोजन करना चाहिए । (५) विद्यार्थी को गृहस्थ के बंधनों से मुक्त होना चाहिए ।

प्र. ४९२. शास्त्र में विद्यार्थी को कितने वर्ष तक विद्या अध्ययन करने की छूट दी गई है ?

उत्तर : शास्त्र में विद्यार्थी को ४८ वर्ष तक विद्या अध्ययन करने की छूट दी गई है ।

प्र. ४९३. विद्यार्थी को किन से दूर रहना = बचना चाहिए ?

उत्तर : विद्यार्थी को भोग–विलास, आलस्य–प्रमाद, मांसाहार–व्यभिचार, चंचलता, काम–क्रोध आदि दुर्गुणों, दुर्व्यसनों से बचना चाहिए ।

प्र. ४९४. विद्या–अर्जन करने की सर्वोत्तम पद्धति क्या है ?

उत्तर : विद्या–अर्जन करते समय विद्यार्थी को अध्यापक की आँखों से आँख मिलाते हुए अपनी कर्णेन्द्रिय को अध्यापक के उपदेश को ध्यान पूर्वक सुनने में लगाना चाहिए तथा अपने कर्णेन्द्रिय को मन से एवं मन को आत्मा से संयुक्त करते हुए विद्या अर्जन करना चाहिए ।

प्र. ४९५. शतरंज, कैरम, आदि (Indor Game) और आजकल जो विडियोगेम और कम्प्यूटर तथा मोबाईल आदि में

विविध खेल (Games) उपलब्ध हैं तो क्या इन खेलों से विद्यार्थी का पूर्ण विकास हो पाएगा ?

उत्तर : जी नहीं, विद्यार्थी अवस्था में खेल-कूद, आसन-व्यायाम करना चाहिए। इससे शारीरिक शक्ति, पाचन शक्ति तथा स्फूर्ति, ताजगी में वृद्धि होती है। आसन-व्यायाम, खेल-कूद भी इस प्रकार करना चाहिए कि उनसे पर्याप्त पसीना निकले। किंतु विद्या अध्ययन छोड़कर हर समय खेल-कूद आदि नहीं करना चाहिए।

प्र. ४९६. जीवन में प्रगति हेतु दोषों के विषय में कैसी सोच रखनी चाहिए ?

उत्तर : जीवन में प्रगति हेतु अपने दोषों को सतत देखते रहना चाहिए और उससे संघर्ष करके दूर करना चाहिए, उनसे कोई समझौता नहीं करना चाहिए। औरों के (= अन्य व्यक्तियों के) दोषों के प्रति ध्यान नहीं देना चाहिए।

प्र. ४९७. दोष बताए जाने पर कैसे वर्तना चाहिए ?

उत्तर : दोष बताए जाने पर धैर्यपूर्वक सुनना चाहिए। अपने दोषों को स्वीकार करके उन्हें दूर करना चाहिए। अपने दोष दूसरों पर आरोपित नहीं करने चाहिए।

प्र. ४९८. जो दोष हममें नहीं हो और मिथ्या आरोप लगाये जाएँ तो क्या करें ?

उत्तर : ऐसे मिथ्या आरोपों के विषय में चिंता नहीं करनी चाहिए, क्रोधित नहीं होना चाहिए और सहनशक्ति को बनाए रखना चाहिए। आवश्यकता होने पर बाद में स्पष्टीकरण कर देना चाहिए।

सफलता

प्र. ५१२. सफलता प्राप्त करने के कुछ कारण लिखो ।प

उत्तर : सफलता प्राप्त करने के लिए – सतर्कता और सावधानी, स्वास्थ्य तथा बल, नियमित दिनचर्या, संकल्प व प्रतिज्ञा, समय पर शीघ्र निर्णय लेना, चिन्तन–विचार करना, परिणाम-प्रभावों का अनुमान लगाना, सहनशीलता व धैर्य, प्रतिज्ञा-वचन का पालन, सेवा-परोपकार दया, आत्मविश्वास, ईश्वर पर अटूट श्रद्धा, दया व क्षमा की भावना, त्रुटि भूल का सुधार आदि मुख्य कारण हैं।

प्र. ५१३. असफल कौन होता है ?

उत्तर : असावधान, निर्बल, रोगी, अनियमित, अव्यवस्थित, दीर्घ सूत्री (काम को देरी से करने वाला), निराश हताश, अस्त व्यस्त, आलसी प्रमादी, क्रूर–कठोर, स्वार्थी, चंचल–शीघ्रकारी, संकल्प, प्रतिज्ञा, कंजूस, लोभी, नास्तिक व्यक्ति असफल होता है।

प्र. ५१४. सफलता प्राप्त करने के पाँच मूल सूत्र बतलाईए ?।

उत्तर : सफलता प्राप्त करने के लिए – (१) मन में कार्य करने की तीव्र इच्छा हो (२) कार्य करने के लिए पर्याप्त साधनों का संग्रह हो (३) साधन का प्रयोग करने की यथार्थ विधि का ज्ञान हो (४) अन्तिम परिणाम आने तक पूर्ण पुरुषार्थ हो (५) बाधकों को सहन करने हेतु घोर तपस्या हो।